डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

उपन्यास

पहचान

अनवर सुहैल

एक

यूनुस एक बार फिर भाग रहा है।

ठीक इसी तरह उसका भाई सलीम भी भागा करता था।

लेकिन क्या भागना ही उसकी समस्या का समाधान है?

यूनुस ने अपना सिर झटक दिया।

विचारों के युद्ध से बचने के लिए वह यही तरीका अपनाता।

इस वक्त वह सिंगरौली स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़ा है।

सिंगरौली रेलवे स्टेशन।

अभी रात के ग्यारह बजे हैं।

कटनी-चौपन पैसेंजर रात बारह के बाद ही आएगी।

प्लेटफार्म कब्रिस्तान बना हुआ है। ठंड की चादर ओढ़ कर सोया कब्रिस्तान। धुँधली रोशनी में कुहरे की हिलती चादर। लोग चलते तो यूँ लगता जैसे कब्रों का रखवाला आकर दौरा कर जाता हो। जहाँ ऐसा लगता है कि कब्रों से उठकर आत्माएँ सफेद, काले कपड़े से बदन लपेटे गश्त कर रही हों।

आजकल भीड़ की कोई वजह नहीं है।

कटनी-चोपन पैसेंजर की यही तो पहचान है कि बोगियों और मुसाफिरों की संख्या समान होती है।

यूनुस को भीड़ की परवाह भी नहीं।

सफर में सामान की हिफाजत का भरोसा हो जाए तो वह बैठने की जगह भी न माँगे।

उसके पास सामान भी क्या है? एक एअर-बैग ही तो है।

उसे कहीं भी टिका वह घूम-फिर सकता है।

दिसंबर की कड़कड़ाती ठंड...

दिखाई देने वाला हर आदमी सिकुड़ा-सिमटा हुआ। बदन पर ढेरों कपड़े लादे। फिर भी ठंड से कँपकँपाए।

इधर ठंड कुछ अधिक पड़ती भी है। बघेल-खंड का इलाका है यह! दाँतों को कड़कड़ा देने वाली ठंड के लिए मशहूर सिंगरौली का रेलवे स्टेशन! पहाड़ी इलाका, कोयला खदान और ताप-विद्युत इकाइयों के कारण मानो जान बच जाती है, वरना ऐसी ठंड पड़ती कि अच्छे-खासे लोग टें बोल जाएँ।

स्टेशन-मास्टर के कमरे के बगल में प्रथम एवं द्वितीय श्रेणी शयनयान के आरक्षित यात्रियों के लिए प्रतीक्षालय है। दरवाजे में लगे काँच पर धुंध छा गई थी, इसलिए यूनुस ने भिड़काए दरवाजे को ठेलकर भीतर झाँका।

वहाँ एक अधेड़ आदमी और एक स्त्री बैठे हुए थे। एनटीपीसी या फिर कॉलरी का साहब हो। वैसे भी किसी ऐरे-गैरे के लिए प्रतीक्षालय नहीं खोला जाता।

प्रतीक्षालय के बगल में रनिंग-स्टाफ रूम था। फिर उसके बाद आरपीएफ के जवानों के लिए कमरा था।

उस कमरे के बाहर रात्रि-पाली के कर्मचारियों ने सिगड़ी में आग जला रखी थी। चार आदमी आग ताप रहे थे। उनके बीच थोड़ी सी जगह बची थी, जहाँ एक कुत्ता बदन सेंक रहा था। यूनुस कुत्ते के पास जा कर खड़ा हो गया। सिगड़ी की आँच की सिंकाई से उसे कुछ राहत मिली।

रेलवे के कर्मचारी अप-डाउन, एईएन, सायरन, डिरेल, सिग्नल आदि शब्दों का उच्चारण कर अपने विचारों का आदान-प्रदान कर रहे थे।

मफलर से आँख छोड़ पूरा चेहरा लपेटे एक कर्मचारी बोला - 'भाईजान, आज शाम तबीयत कुछ डाउन लग रही थी। कड़क चाय बनवाकर पी लेकिन पिकअप न बना। ऐसे सिग्नल मिले कि लगा इस बार पायलट डिरेल हुआ, तो फिर उठाना मुश्किल होगा। तभी दिमाग में सायरन बजा और तुरंत भट्टी पहुँचे। वहाँ फोर-डाउन वाला मिसरवा गार्ड मिल गया। दोनों ने मिलकर मूड बनाया। तब जाकर जान बची।'

यूनुस थोड़ी देर उनकी बात से लुत्फ उठाता रहा, फिर स्टेशन से बाहर निकल आया।

बाहर एक बड़ा सा पार्क है। पार्क के दोनों ओर दो सड़कें निकली हैं। दोनों सड़कें आगे जाकर मेन रोड से मिलती हैं।

पार्क के सामने रोड के किनारे-किनारे, एक लाइन से कई टैक्सियाँ और एक मिनी-बस खड़ी थी। इन टैक्सियों या मिनी बसों के चालक अमूमन उनके मालिक होते हैं।

एक पेड़ का मोटा सा सूखा तना सुलगाए वे आग ताप रहे थे।

एक खलासीनुमा चेला चिलम बना रहा था।

यूनुस वहाँ रुका नहीं।

वह बाईं ओर की ढाल-दार सड़क पर चल पड़ा। मेन रोड के उस पार तीन-चार होटल हैं।

ये होटल चौबीस घंटे सर्विस देते हैं। उन होटलों में लालटेन जल रही थी।

उसने होटल का जायजा लिया। पहला छोड़ दूसरे होटल में एक महिला भट्टी के पास खड़ी चाय बना रही थी।

यूनुस उसी होटल में घुसा।

सीधे भट्टी के पास पहुँच गया। उसने कंधे पर टँगा एअर-बैग उतार कर एक कुर्सी पर रख दिया। फिर हथेलियों को आपस में रगड़ते हुए आग तापने लगा।

महिला ने उसे घूरकर देखा।

यूनुस को उसका घूरना अच्छा लगा।

वह तीस-बत्तीस साल की महिला थी। भट्टी की लाल आँच और लालटेन की पीली रोशनी के मिले-जुले प्रभाव में उसका चेहरा भला लग रहा था। जैसे ताँबई-सुनहरी आभा लिए कोई कांस्य-कृति।

महिला ने चाय केतली में ढालते हुए पूछा - 'क्या चाहिए?'

यूनुस ने मजा लेना चाहा - 'यहाँ क्या-क्या मिलता है?'

महिला ने उसे घूरकर देखा, फिर जाने क्या सोचकर हँस दी।

होटल के तीन हिस्से थे। आधे हिस्से में ग्राहक के बैठने की जगह। आधे हिस्से को दो भागों में टाट के पर्दे से अलग किया गया था। सामने का भाग रसोई के रूप में था और बाकी आधा हिस्से में लगता है, उसकी आरामगाह थी।

आरामगाह से किसी वृद्ध के खाँसने की आवाज आई, साथ ही लरजती आवाज में एक प्रश्न - 'पसिन्जर आ गई का?'

महिला ने जवाब दिया - 'अभी नहीं।'

यूनुस को टाइम पास करना था, सो उसने आर्डर दिया - 'कड़क चाय, चीनी-पत्ती तेज रहेगी।'

महिला उसकी मंशा समझ गई।

उसने बर्तन में स्पेशल चाय के लिए दूध डाला और फिर ढेर सारी पत्ती डालकर चाय खूब खौला दी।

चाय उसने दो गिलासों में ढाली।

एक चाय यूनुस को दी और दूसरी स्वयं पीने लगी।

यूनुस ने महसूस किया कि ठंड इतनी ज्यादा है कि चाय गिलास में ज्यादा देर गरम न रह पाई।

यूनुस ने चुस्की लेते हुए चाय का आनंद उठाया।

उसे अपने 'डाक्टर-उस्ताद' की बात याद हो आई...

डोजर आपरेटर शमशेर सिंह उर्फ 'डाक्टर-उस्ताद' को ठंड नहीं लगती थी। वह कहा करता कि ठंड का इलाज आग या गर्म कपड़े नहीं बल्कि शराब, शबाब और कबाब है।

यूनुस ने शराब तो कभी छुई नहीं थी, किंतु शबाब या कबाब से उसे परहेज न था।

शबाब के लिए तो वैसे भी सिंगरौली क्षेत्र बदनाम है।

औद्योगिक विकास की आँधी के कारण देश भर के उद्योगपति-व्यवसायी, टेक्नोक्रेट और कुशल-अकुशल श्रमिक-शक्ति सिंगरौली क्षेत्र में डेरा डाले हुए हैं। पहले तो लोग बिना परिवार के यहाँ आते हैं। बिना रिहाइशी इंतजाम के ये लोग हर तरह की जरूरत की वैकल्पिक व्यवस्था के अड्डे तलाश कर लेते हैं। इसीलिए यहाँ ऐसे कई गोपनीय अड्डे हैं जहाँ जिस्म की भूख मिटाई जाती है।

ऐसे ही एक अड्डे से प्राप्त अनुभव को यूनुस ने याद किया।

दो

कल्लू नाम था उसका। वह बीना की खुली कोयला खदान में काम करता था।

यूनुस तब वहाँ कोयला-डिपो में पेलोडर चलाया करता था। वह प्राइवेट कंपनी में बारह घंटे की ड्यूटी करता था। तनख्वाह नहीं के बराबर थी। शुरू में यूनुस डरता था, इसलिए ईमानदारी से तनख्वाह पर दिन गुजारता था।

तब यदि खाला-खालू का आसरा न होता तो वह भूखों मर गया होता।

फिर धीरे-धीरे साथियों से उसने मालिक-मैनेजर-मुंशी की निगाह से बच कर पैसे कमाने की कला सीखी। वह पेलोडर या पोकलेन से डीजल चुरा कर बेचने लगा। अन्य साथियों की तुलना में यूनुस कम डीजल चोरी करता, क्योंकि वह दारू नहीं पीता था।

कल्लू उससे डीजल खरीदता था।

खदान की सीमा पर बसे गाँव में कल्लू की एक आटा-चक्की थी। वहाँ बिजली न थी। चोरी के डीजल से वह चक्की चलाया करता।

धीरे-धीरे उनमें दोस्ती हो गई।

अक्सर कल्लू उससे प्रति लीटर कम दाम लेने का आग्रह करता कि किसके लिए कमाना भाई। जोरू न जाता फिर क्यूँ इत्ता कमाता। उनमें खूब बनती।

फुर्सत के समय यूनुस टहलते-टहलते कल्लू के गाँव चला जाता।

कालोनी के दक्खिनी तरफ, हाईवे के दूसरी ओर टीले पर जो गाँव दिखता है, वह कल्लू का गाँव परसटोला था।

परसटोला यानी गाँव के किनारे यहाँ पलाश के पेड़ों का एक झुंड हुआ करता था। इसी तरह के कई गाँव इलाके में हैं जो कि अपनी हद में कुछ खास पेड़ों के कारण नामकरण पाते हैं, जैसे कि महुआर टोला, आमाडाँड़, इमलिया, बरटोला आदि। परसटोला गाँव में फागुन के स्वागत में पलाश का पेड़ लाल-लाल फूलों का श्रृंगार करता तो परसटोला दूर से पहचान में आ जाता।

परसटोला के पश्चिमी ओर रिहंद बाँध का पानी हिलोरें मारता। सावन-भादों में तो ऐसा लगता कि बाँध का पानी गाँव को लील लेगा। कुवार-कार्तिक में जब पानी गाँव की मिट्टी को अच्छी तरह भिगोकर वापस लौटता तो परसटोला के निवासी उस जमीन पर खेती करते। धान की अच्छी फसल हुआ करती। फिर जब धान कट जाता तो उस नम जगह पर किसान अरहर छींट दिया करते।

रिहंद बाँध को गोविंद वल्लभ पंत सागर के नाम से भी जाना जाता है। रिहंद बाँध तक आकर रेंड़ नदी का पानी रुका और फिर विस्तार में चारों तरफ फैलने लगा। शुरू में लोगों को यकीन नहीं था कि पानी इस तरह से फैलेगा कि जल-थल बराबर हो जाएगा।

इस इलाके में वैसे भी सांमती व्यवस्था के कारण लोकतांत्रिक नेतृत्व का अभाव था। जन-संचार माध्यमों की ऐसी कमी थी कि लोग आजादी मिलने के बाद भी कई बरस नहीं जान पाए थे कि अंग्रेजी राज खत्म हुआ। गहरवार राजाओं के वैभव के किस्से उन ग्रामवासियों की जुगाली का सामान थे।

फिर स्वतंत्र भारत का एक बड़ा पुरस्कार उन लोगों को यह मिला कि उन्हें अपनी जन्मभूमि से विस्थापित होना पड़ा। वे ताम-झाम लेकर दर-दर के भिखारी हो गए। ऐसी जगह भाग जाना चाहते थे कि जहाँ महा-प्रलय आने तक डूब का खतरा न हो। ऐसे में मोरवा, बैढ़न, रेणूकूट, म्योरपुर, बभनी, चपकी आदि पहाड़ी स्थानों की तरफ वे अपना साजो-सामान लेकर भागे। अभी वे कुछ राहत की साँस लेना ही चाहते थे कि कोयला निकालने के लिए कोयला कंपनियों ने उनसे उस जगह को खाली कराना चाहा। ताप-विद्युत कारखाना वालों ने उनसे जमीनें माँगीं। वे बार-बार उजड़ते-बसते रहे।

कल्लू के बूढ़े दादा डूब के आतंक से आज भी भयभीत हो उठते थे। उनके दिमाग से बाढ़ और डूब के दृश्य हटाए नहीं हटते थे। हटते भी कैसे? उनके गाँव को, उनकी जन्म-भूमि को, उनके पुरखों की कब्रगाहों-समाधियों को इस नामुराद बाँध ने लील लिया था।

ये विस्थापन ऐसा था जैसे किसी बड़े जड़ जमाए पेड़ को एक जगह से उखाड़कर दूसरी जगह रोपा जाए...

क्या अब वे लोग कहीं भी जम पाएँगे?

कल्लू के दादा की आँखें पनिया जातीं जब वह अपने विस्थापन की व्यथा का जिक्र करते थे। जाने कितनी बार उसी एक कथा को अलग-अलग प्रसंगों पर उनके मुख से यूनुस को सुन चुका था।

दादा एक सामान्य से देहाती थे। खाली न बैठते। कभी क्यारी खोदते, कभी घास-पात उखाड़ते या फिर झाड़ू उठाकर आँगन बुहारने लगते।

दुबली-पतली काया, झुकी कमर, चेहरे पर झुर्रियों का इंद्रजाल, आँखों पर मोटे शीशे का चश्मा, बदन पर एक बंडी, लट्ठे की परधनी, कंधे पर या फिर सिर पर पड़ा एक गमछा और चलते-फिरते समय हाथों में एक लाठी।

वह बताते कि उस साल बरस बरसात इतनी अधिक हुई कि लगा इंद्र देव कुपित हो गए हों। आसमान में काले-पनीले बादलों का आतंक कहर बरसाता रहा। बादल गरजते तो पूरा इलाका थर्रा जाता।

यूनुस भी जब सिंगरौली इलाके में आया था तब पहली बार उसने बादलों की इतनी तेज गड़गड़ाहट सुनी थी। शहडोल जिले में पानी बरसता है लेकिन बादल इतनी तेज नहीं गड़गड़ाया करते। शहडोल जिले में बारिश अनायास नहीं होती। मानसून की अवधि में निश्चित अंतराल पर पानी बरसता है। जबकि सिंगरौली क्षेत्र में इस तरह से बारिश नहीं होती। वहाँ अक्सर ऐसा लगता है कि शायद इस बरस भी बारिश नहीं होगी। एक-एक कर सारे नक्षत्र निकलते जाते हैं और अचानक कोई नक्षत्र ऐसा बरसता है कि सारी संभावनाएँ ध्वस्त हो जाती हैं। लगता है कि बादल फट पड़ेंगे। अचानक आसमान काला-अँधेरा हो जाता है। फिर बादलों की गड़गड़ाहट, बिजली की चमक के साथ ऐसी भीषण बरसात होती कि लगे जल-थल बराबर हो जाएगा।

वैसे इधर-उधर से आते-जाते लोगों से सूचना मिलती रहती कि पानी धीरे-धीरे फैल रहा है। लेकिन किसे पता था कि अनपरा, बीजपुर, म्योरपुर, बैढ़न, कोटा, बभनी, चपकी, बीजपुर तक पानी के विस्तार की संभावना होगी।

तब देश में कहाँ थी संचार क्रांति? कहाँ था सूचना का महाविस्फोट? तब कहाँ था मानवाधिकार आयोग? तब कहाँ थी पर्यावरण-संरक्षण की अवधारणा? तब कहाँ थे सर्वेक्षण करते-कराते परजीवी एनजीओ? तब कहाँ थे विस्थापितों को हक और न्याय दिलाते कानून?

नेहरू के करिश्माई व्यक्तित्व का दौर था। देश में कांग्रेस का एकछत्र राज्य। नए-नए लोकतंत्र में बिना शिक्षित-दीक्षित हुए, गरीबी और भूख, बेकारी, बीमारी और अंधविश्वास से जूझते देश के अस्सी प्रतिशत ग्रामवासियों को मतदान का झुनझुना पकड़ा दिया गया। उनके उत्थान के लिए राजधानियों में एक से बढ़कर एक योजनाएँ बन रही थीं। आत्म-प्रशंसा के शिलालेख लिखे जो रहे थे।

अंग्रेजी राज से आतंकित भारतीय जनता ने नेहरू सरकार को पूरा अवसर दिया था कि वह स्वतंत्र भारत को स्वावलंबी और संप्रभुता संपन्न बनाने में मनचाहा निर्णय लें।

देश में लोकतंत्र तो था लेकिन बिना किसी सशक्त विपक्ष के।

इसीलिए एक ओर जहाँ बड़े-बड़े सार्वजनिक प्रतिष्ठान आकार ले रहे थे वहीं दूसरी तरफ बड़े पूँजीपतियों को पूँजी-निवेश का जुगाड़ मिल रहा था।

यानी नेहरू का समाजवादी और पूँजीवादी विकास के घालमेल का मॉडल।

आगे चलकर ऐसे कई सार्वजनिक प्रतिष्ठानों को बाद की सरकारों ने कतिपय कारणों से अपने चहेते पूँजीपतियों को कौड़ी के भाव बेचने का षड्यंत्र किया।

पुराने लोग बताते हैं कि जहाँ आज बाँध है वहाँ एक उन्नत नगर था। गहरवार राजा की रियासत थी। केवट लोग बताते हैं कि अभी भी उनके महल का गुंबद दिखलाई पड़ता है।

गहरवार राजा भी होशियार नहीं थे। कहते हैं कि उनके पुरखों का गड़ा धन डूब गया है।

असल सिंगरौली तो बाँध में समा चुकी है।

आज जिसे लोग सिंगरौली नाम से पुकारते हैं वह वास्तव में मोरवा है।

तभी तो जहाँ सिंगरौली का बस-स्टैंड है उसे स्थानीय लोग पंजरेह बाजार नाम से पुकारते हैं।

कल्लू के दादा से खूब गप्पें लड़ाया करता था यूनुस।

वे बताया करते कि जलमग्न सिंगरौली रियासत में सभी धर्म-जाति के लोग बसते थे।

सिंगरौली रियासत धन-धान्य से परिपूर्ण थी।

तीज-त्योहार, हाट-बाजार और मेला-ठेला हुआ करता था। तब इस क्षेत्र में बड़ी खुशहाली थी। लोगों की आवश्यकताएँ सीमित थीं। फिर कल्लू के दादा राज कपूर का एक गीत गुनगुनाते - 'जादा की लालच हमको नहीं, थोड़ा से गुजारा होता है।'

मिर्जापुर, बनारस, रीवा, सीधी और अंबिकापुर से यहाँ के लोगों का संपर्क बना हुआ था।

यूनुस मुस्लिम था इसलिए एक बात वह विशेष तौर बताते कि सिंगरौली में मुहर्रम बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता था।

सभी लोग मिल-जुल कर ताजिया सजाते थे।

खूब ढोल-ताशे बजाए जाते।

तैंयक तक्कड़ धम्मक तक्कड़

सैंयक सक्कर सैंयक सक्कर

दूध मलीदा दूध मलिद्दा...

खिचड़ा बँटता, दूध-चीनी का शर्बत पिलाया जाता।

सिंगरौली के गहरवार राजा का भी मनौती ताजिया निकलता था। मुसलमानों के साथ हिंदू भाई भी शहीदाने-कर्बला की याद में अपनी नंगी-छाती पर हथेली का प्रहार कर लयबद्ध मातम करते।

'हस्सा-हुस्सैन... हस्सा-हुस्सैन'

कल्लू के दादा बताते कि उस मातम के कारण स्वयं उनकी छाती लहू-लुहान हो जाया करती थी। वह लाठी भाँजने की कला के माहिर थे। ताजिया-मिलन और कर्बला ले जाने से पहले अच्छा अखाड़ा जमता था। सैकड़ों लोग आ जुटते थे। थके नहीं कि सबील-शर्बत पी लेते, खिचड़ा खा लेते। रेवड़ियों और इलाइचीदाने का प्रसाद खाते-खाते अघा जाते थे।

यूनुस ने भी बचपन में एक बार दम भर कर मातम किया था, जब वह अम्मा के साथ उमरिया का ताजिया देखने गया था। सलीम भाई तो ताजिया को मानता न था। उसके अनुसार ये जहालत की निशानी है। एक तरह का शिर्क (अल्लाह के अलावा किसी दूसरी जात को पूजनीय बनाना) है। खैर, ताजिया की प्रतीकात्मक पूजा ही तो करते हैं मुजाविर वगैरा...

यूनुस ने सोचा कि अगर लोग उस ताजिया को सिर झुकाकर नमन करते हैं तो कहाँ मना करते हैं मुजाविर! उनका तो धंधा चलना चाहिए। उनका ईमान तो चढ़ौती में मिलने वाली रकम, फातिहा के लिए आई सामग्री और लोगों की भावनाओं का व्यावसायिक उपयोग करना ही तो होता है। साल भर इस परब का वे बेसब्री से इंतजार करते हैं। हिंदू-मुसलमान सभी मुहर्रम के ताजिए के लिए चंदा देते हैं।

उमरिया में तो एक से बढ़कर एक खूबसूरत ताजिया बनाए जाते हैं। लाखों की भीड़ जमा होती है। औरतों और मर्दों का हुजूम। खूब खेल-तमाशे हुआ करते हैं। जैसे-जैसे रात घिरती जाती है, मातम और मर्सिया का परब अपना रंग जमाता जाता है। कई हिंदू भाइयों पर सवारी आती है। लोग अँगुलियों के बीच ब्लेड के टुकड़े दबा कर नंगी छातियों पर प्रहार करते हैं, जिससे जिस्म लहू-लुहान हो जाता है।

ईरानी लोग जो चाकू-छुरी, चश्मा आदि की फेरी लगाकर बेचा करते हैं, उनका मातम देख तो दिल दहल जाता है। वे लोग लोहे की जंजीरों पर काँटे लगा कर अपने जिस्म पर प्रहार कर मातम करते हैं।

कुछ लोग शेर बनते हैं।

शेर का नाच यूनुस को बहुत पसंद आया था।

रंग-बिरंगी पन्नियों और कागजों की कतरनों से सुसज्जित ताजियए के नीचे से लोग पार होते। हिंदू और मुस्लिम औरतें, बच्चे और आदमी सभी बड़ी अकीदत के साथ ताजिए के नीचे से निकलते। यूनुस ने देखा था कि एक जगह एक महिला ताजिया के सामने अपने बाल छितराए झूम रही है।

डूब में बसे कस्बे में मुहर्रम के मनाए जाने का कुछ ऐसा ही दृश्य कल्लू के दादा बताया करते थे।

लोगों का जीवन खुशहाल था।

रबी और खरीफ की अच्छी खेती हुआ करती थी।

उस इलाके की खुशहाली पर अचानक ग्रहण लग गया।

लोगों ने सुना कि अब ये इलाका जलमग्न हो जाएगा।

किसी ने उस बात पर विश्वास नहीं किया।

सरकारी मुनादी हुई तो बड़े-बुजुर्गों ने बात को हँस कर भुला दिया। अभी तो देश आजाद हुआ है। अंग्रेज भी ऐसा काम न करते, जैसा आजाद भारत के कर्णधार करने वाले थे।

इस बात पर कौन यकीन कर सकता था कि गाँव के गाँव, घर-बार, कार्य-व्यापार, देव-स्थल, मस्जिदें, कब्रगाहें सब जलमग्न हो जाएँगी। और तो और गहरवार राजा का महल भी डूब जाएगा।

उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की सीमा पर बसा सिंगरौली क्षेत्र। उस क्षेत्र के लोगों की चिंता उत्तर प्रदेश की सरकार को थी और न मध्य प्रदेश की सरकार को।

रेणूकूट में बाँध बन कर तैयार हो चुका था। धीरे-धीरे पानी का स्तर बढ़ रहा था। सरकारें खामोशी से डूब की प्रतीक्षा कर रही थीं। स्थानीय लोग ये मानने को मानसिक रूप से तैयार न थे कि अंग्रेजों के जाने के बाद एक ऐसा समय भी आएगा जब उन्हें अपने पूर्वजों की समाधियों को, अपने कुल-देवताओं को, अपनी जन्म-भूमि को छोड़ना पड़ेगा। अपनी मातृभूमि से उन्हें बेदखल होना पड़ेगा। विस्थापन का दंश झेलना पड़ेगा।

लोगों को कहाँ मालूम था कि देश के एक बड़े उद्योगपति बिड़ला की इच्छा है कि उन्हें एल्यूमिनियम बनाने का एशिया-प्रसिद्ध प्लांट यहीं डालना है, क्योंकि ये एक पिछड़ा इलाका है। यहाँ किसी तरह का राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं होगा। किसी तरह की प्रशासनिक अड़चनों का सामना नहीं करना होगा। कम से कम लागत पर अत्यधिक लाभ का अवसर वहाँ था।

हवाई जहाज द्वारा इस इलाके की प्राकृतिक संपदा का आकलन हो चुका था।

बिड़ला जी द्वारा लाखों एकड़ की वन-भूमि पर कब्जा हो चुका था। प्लांट के लिए उपकरण आयात किए जा रहे थे।

आधुनिक युग के तीर्थ उद्योग-धंधे होंगे, नेहरू का नया मुहावरा देश की फिजा में गूँज रहा था।

नेहरू की तिलस्मी छवि के लिए देश में कोई चैलेंज न था।

गांधी-नेहरू मित्र बिड़ला जी को अपने भावी उद्योग के लिए चाहिए थी सस्ती जमीन, आयातित उपकरण और पर्याप्त मात्रा में बिजली।

बिजली के लिए जरूरी था पानी और कोयला।

पानी के लिए तो नेहरू बनवा ही रहे थे बाँध और ईंधन के लिए सिंगरौली क्षेत्र में था कोयले का अकूत भडार।

सिंगरौली क्षेत्र में है एशिया की सबसे मोटी कोयला परतों में से एक परत 'झिंगुरदह सीम' जो कि लगभग एक सौ पचास मीटर मोटी है।

झिंगुरदह खदान से कोयला 'एरियल रोप-वे' द्वारा बिड़ला जी के पावर प्लांट 'रेणुसागर' में आता। रेणूसागर में ताप-विद्युत तकनीकी से बिजली बनती जिसे सीधे रेणुकूट में स्थित एल्यूमिनियम कारखाने में भेजा जाता था।

कोयला उद्योग का जब इंदिरा गांधी ने राष्ट्रीयकरण किया तभी से सिंगरौली कोयला क्षेत्र में सुव्यवस्थित कोयला उत्पादन की योजनाएँ बनीं। बाँध के इर्द-गिर्द मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश की राज्य सरकारों ने और एनटीपीसी ने अपने ताप-विद्युत केंद्र स्थापित किए।

एक समय था जब दादा-पुरखे किसी को शाप देते तो यही कहते थे - 'जा बैढ़न को...'

आज वही अभिशप्त बैढ़न नव-उद्यमियों, तकनीशियनों, पूँजीपतियों, पब्लिक स्कूलों, गैरसरकारी संगठनों, धार्मिक-आध्यात्मिक व्यवसायियों आदि के लिए स्वर्ग बना हुआ है।

एक से एक सर्वसुविधायुक्त नए-नए नगर स्थापित हो रहे हैं। बैढ़न में जमीन की कीमतें आकाश छू रही हैं।

आज सिंगरौली एक ऊर्जा-तीर्थ के रूप में याद किया जाता है।

तीन

कल्लू के गाँव के नीचे एक नाला बहता था। दर्रा-नाला। खदान से निकला पानी और कालोनी का निकासी पानी नाले में साल भर बहता। दर्रा-नाले के इर्द-गिर्द एक बस्ती आबाद हो गई थी। यह ठेकेदारी मजदूरों की बस्ती थी। इस आबादी का नाम सफेदपोश लोगों ने आजाद नगर नाम दिया था।

आजाद नगर नाम के अनुसार ये बस्ती भारतीय दंड विधान की धाराओं, उपधाराओं आदि पाबंदियों से आजाद थी। इस बस्ती को समस्त वर्जनाओं से आजादी मिली हुई थी। आजाद नगर में प्रचुरता से उपलब्ध था - शराब, शबाब, कबाब, जरायम-पेशा लोग, भूख-बीमारी-बेकारी और सट्टा-जुआ के अड्डे।

सभ्य-जन इधर का रुख न करते, वे उसे पाप-नगरी कहते। रावण की लंका और नर्क का द्वार कहते।

इस नर्क के निवासी थे तमाम मेहनतकश...

ये मेहनत-कश कार्ल-मार्क्स के देसी संस्करण वाले तमाम मजदूर संगठनों की निगाह से उपेक्षित थे। उनकी खुशहाली के लिए उन मजदूर संगठनों के पास कोई कार्यक्रम न था। उन लोगों के लिए कोई मानवाधिकार आयोग न था। कोई टाउन-प्लानिंग कमेटी न थी। कोई अस्पताल, कोई नर्सिंग होम न था। उनके लिए कोई रिक्शा-स्टैंड या बस-अड्डा न था। उनके बच्चों के लिए कोई स्कूल न था। उनके लिए किसी तरह की औपचारिक या अनौपचारिक शिक्षा की कोई व्यवस्था न थी।

उनकी आध्यात्मिक उन्नति के लिए कोई मौलवी, पंडित या पादरी न था।

उनमें ज्यादातर लोग कोयले के ढेर से पत्थर-शेल छाँट कर अलग करने वाले मजदूर थे। खदान चलाने के लिए भवन, नगर, सड़कें और विशालकाय वर्कशाप आदि निर्माण के काम में नियोजित सैकड़ों रेजा मजदूर और

मिस्त्री। विद्युत, यांत्रिकीय, सिविल आदि काम के लिए कुशल-अकुशल ठेकेदारी कामगार। मेहनत-मशक्कत, नैन-मटक्का से लेकर गाने-बजाने तक में कुशल युवतियाँ।

आजाद नगर में कुछ छोटे-मोटे ठेकेदारों ने भी अपने आशियाने सजाए हुए थे।

पुलिस थाने के रिकार्ड में ये बस्ती तमाम अपराधों की जन्मदाता के नाम से मशहूर थी। इसलिए पुलिस यहाँ अक्सर दबिश करती और प्रकरण बनाया करती, लेकिन गलत काम पूरी तरह से बंद नहीं करवाती। लोग कहते कि यदि आजाद नगर सुधर गया या उजड़ गया तो फिर पुलिस विभाग की कमाई बंद हो जाएगी।

कल्लू आजाद नगर के उस हिस्से का नियमित ग्राहक था, जहाँ दारू और रूप का सौदा होता था।

ऐसे ही गप्प के दौरान यूनुस ने एक किशोरी के बारे में जानना चाहा, जो साइकिल पर दनदनाती फिरती है। लोग कहते हैं कि वह थानेदार और एक बड़े ठेकेदार की रखैल है।

कल्लू ने यूनुस की तरफ अविश्वास से देखा - 'का गुरू, तुम भी इस चक्कर में रहते हो?'

यूनुस क्या जवाब देता - 'तो क्या, मैं आदमी नहीं हूँ का?'

बस, फिर क्या था।

कल्लू एक दिन यूनुस को आजाद नगर ले गया।

पहले तो यूनुस ने ना-नुकुर की। उसे डर था कि कहीं ये बात खालू या खाला तक न पहुँचे। उसकी गत बन जाएगी। यदि सनूबर उसकी ये हरकत जान गई तो जिंदगी भर माफ न करेगी। उसे कितना प्यार करती है सनूबर।

अरे, जब सनूबर की चचेरी बहन जमीला ने यूनुस को अपने हुस्न के जाल में फँसाना चाहा था तो सनूबर ने ही उसे बचाया था।

जमीला यूनुस से चार-पाँच साल बड़ी होगी। वह विवाहित थी। उस समय उसके बच्चा न हुआ था। एकदम पके आम की तरह गदराई हुई थी।

जमीला मैके आई तो खाला से मिलने चली आई। जमीला का शौहर खाड़ी देश कमाने गया था। जमीला के पास पैसे तो इफरात थे। इसीलिए वह दिल खोल कर खर्च करती थी। ऐसे मेहमान किसे बुरे लग सकते हैं।

जमीला की खाला से खूब पटती। वे जब भी मिलतीं, जाने क्या बातें करके खूब हँसतीं, ज्यों बचपन की बिछड़ी पक्की सहेली हों।

जमीला की नाक में पड़ी सोने की लौंग में एक नग गड़ा था। रोशनी पड़ने पर वह खूब चमकता। उसकी चमक से जमीला की आँखें दमकने लगतीं। यूनुस जब भी जमीला की तरफ देखता, उसकी नाक की लौंग की चमक के तिलस्म में उलझ कर रह जाता।

शायद इस बात से जमीला वाकिफ थी।

यूनुस ने महसूस किया कि जमीला उसकी तरफ कुछ अधिक झुकाव रखती है। ऐसा पहले न था। अब शायद यूनुस किशोरास्था से जवानी की ओर तेजी से कदम बढ़ा रहा था। काम-धंधा करने से उसके जिस्म में गजब की कशिश आ गई थी। था भी यूनुस पाँच फीट सात इंच का गबरू जवान। हल्की-हल्की मूँछ और बाल संजय दत्त जैसे। यूनुस संजय दत्त का फैन था।

यूनुस नाइट-शिफ्ट खट के घर लौटा तो घड़ी में सुबह के दस बज रहे थे। रात पाली में पेलोडर चलाने के बाद यदि गाड़ी में कुछ खराबी आ जाए तो उसे वर्कशॉप लाकर खड़ा करना होता था। फिर गाड़ी में जो भी ब्रेक-डाउन हो उसे मेकेनिक को बतलाकर मरम्मत करवाना रात-पाली के आपरेटर का काम था। वहाँ का सुपरवाइजर एक मद्रासी था। बहुत कानून बतियाता था। सो इस प्रक्रिया में देर तो हो ही जाती।

जब वह घर पहुँचा उस समय खालू ड्यूटी गए हुए थे। खाला कहीं पड़ोस में गपियाने गई थीं। गोद के बच्चे छोड़कर पढ़ने वाले सभी बच्चे स्कूल जा चुके थे।

यूनुस ने दरवाजा ढकेला तो वह खुल गया।

सन्नाटा देख वह बैठकी में रखे तखत पर बैठ गया कि आहट सुनकर कोई बोलेगा। हो सकता है कि खाला गुसलखाने में हों।

लेकिन कुछ देर तक कोई खट-पट नहीं हुई तो वह उठा। रसोई से होकर आँगन की तरफ गया। आँगन में पानी की टंकी थी, जहाँ परिवार के मर्द या फिर बच्चे नहाते-धोते थे।

हाथ-मुँह धोने वह टंकी के पास जा पहुँचा।

अभी वहाँ पहुँच कहाँ पाया था कि उसने जो दृश्य देखा तो उसके होश उड़ गए।

जमीला टंकी के पीछे खड़े-खड़े नहा रही थी।

उसकी कमर से ऊपर का हिस्सा खुला हुआ था।

साँवला जवान जिस्म...

साँचे में ढला बदन...

यूनुस ने उल्टे पाँव भागना चाहा, लेकिन तभी उसकी नाक की लौंग का नग चमचमाने लगा। उसकी चमक से निकली किरनों की रस्सी से यूनुस के पाँव बँध से गए थे।

आहट पाकर जमीला एकबारगी चौंकी, फिर खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसने अपने जिस्म को छुपाया नहीं बल्कि दो मग पानी और जिस्म पर डाल लिया।

यूनुस के होश उड़ गए।

उसने जाना कि जमीला की हँसी में खुला आमंत्रण था।

जमीला एक चैलेंज की तरह उससे टकराई थी।

घबराहट में यूनुस घर से निकल भागा, वह रुका नहीं।

वह तब तक न लौटा जब तक उसे विश्वास न हो गया कि अब घर में खाला और बच्चे आ गए होंगे।

दोपहर में जब वह आँगन में खटिया डाले धूप में सो रहा था, कि उसे लगा उसके ऊपर कोई सोया हुआ है। वह जमीला थी, जो मौका पाकर यूनुस को छेड़ रही थी।

जमीला की छातियाँ उसकी छाती से आ लगी थीं।

यूनुस की साँस अटकने लगी।

जमीला के होंठ यूनुस के चेहरे पर अपना कमाल दिखाने लगे।

जमीला उसके कान में फुसफुसा कर गा रही थी -

'धीरे धीरे प्यार को बढ़ाना है

हद से गुजर जाना है...'

क्या यूनुस को उस समय तक 'हद से गुजर जाने' का मतलब पता चल पाया था?

ऐसा नहीं कि यूनुस कोई संत था लेकिन वह उस समय सनूबर की आँखों की झील में डुबकियाँ लगा रहा था। सनूबर के पल्टे हुए होंठ जब मुस्कराते तो जैसे यूनुस के जेब खनखनाने लगते थे। यूनुस एकाएक रईस आदमी में बदल जाता था।

उसे सनूबर छोड़ और कोई दूसरी लड़की कैसे प्यारी होती?

एक दिन उसने सनूबर से जमीला की हरकतों के बारे में बताया तो सनूबर खूब हँसी। उसने यूनुस को चिढ़ाया कि वह कैसा मर्द-बच्चा है। यहाँ तक कि सनूबर ने जमीला के साथ मिलकर उसकी हँसी भी उड़ाई थी।

यूनुस अपने प्यार के साथ बेवफाई नहीं करना चाहता था।

इस घटना के बाद उसने अपने लिए सनूबर के दिल में और ज्यादा जगह बना ली थी।

चार

यूनुस कोई बाल-ब्रह्मचारी न था और न सदाचार के लिए कृत-संकल्पित युवक।

वह अपने आसपास के अन्य सैकड़ों किशोरों और युवाओं की तरह अपनी शारीरिक क्षमताओं और कमजारियों के प्रति आशंकित रहता था। उसके मन में सहज जिज्ञासा थी कि इंसान के जीवन का ये कैसा अध्याय है, जिसके

प्रति सयाने-बुजुर्ग इतनी घृणा का प्रदर्शन करते हैं। क्या वे वाकई इन गोपन-क्रियाओं के प्रति अनासक्त होते हैं? नहीं, बल्कि इस अनूठी-प्राकृतिक क्रिया में वे आकंठ डूबे होते हैं।

यूनुस एक ऐसे निम्न-मध्यम वर्गीय मुस्लिम परिवार में पैदा हुआ था, जहाँ दो कमरे में पूरी गृहस्थी समाई हुई थी।

जहाँ माता-पिता के बीच प्रेम और घृणा प्रकट करने के लिए कोई पृथक व्यवस्था न थी।

जहाँ हर दो-चार साल के अंतराल में एक संतान का जन्म लेना साधारण घटना थी।

जहाँ बड़े-बुजुर्ग, बच्चों के सामने मुहल्ले के लोगों से खुलकर हँसी-ठिठोली करते थे।

जहाँ स्त्रियाँ आपस में गोपन रहस्यों पर इशारतन बतिया कर अवर्णनीय आनंद उठाया करतीं।

इन ठिठोलियों में देवर-भौजाई के रिश्ते से उपजी अश्लील शब्दावली आम थी।

बच्चे जान जाते थे कि जब सड़ा केला-पिलपिला पपीता कहा जाता है तो उसका भावार्थ क्या होता है ?

जब गहरा कुआँ और छोटी रस्सी की बात करके बड़े हँस रहे हैं तो उसका अर्थ क्या हो सकता है?

जब खलबट्टा से मसाला कुटाई की बात होती है तो मार कहाँ होती है।

परिणामतः उन परिवारों की बेटियाँ असमय युवा होकर नैन-मटक्का करते-करते घर से भाग जाती हैं या फिर बिन-ब्याही माँ बन जाती हैं।

उन परिवारों के लड़के बुआ-मौसी, चाची-काकी, अविवाहित दीदियों या फिर घरेलू नौकरानियों के संपर्क में आकर युवा अनुभवों का पाठ पढ़ते हैं।

इसीलिए यूनुस के, बचपन से जवानी तक के अध्याय निर्दोष न थे।

बीना कोयला खदान में काम के दौरान कल्लू यूनुस का अंतरंग मित्र बन गया।

कल्लू बाल-बच्चेदार किंतु बहुत लापरवाह किस्म का युवक था। यूनुस ने उसकी बीवी को देखा था। वह मुटा कर भैंस हो गई थी।

कल्लू की मौसी दिखती थी वो।

कल्लू के लिए तीन लड़कियाँ और एक लड़का जन चुकी थी वो।

अगर सारे बच्चे जिंदा होते तो अब तक वह पाँच बार माँ बन चुकी थी। एक बार गर्भपात हुआ था। अब उसके जिस्म में रस न था। बच्चों को पाल ले, कल्लू को बस इतनी ही चाह थी उससे।

कल्लू इसीलिए इधर-उधर मुँह मारा करता।

कल्लू ने यूनुस को भी 'स्वाद चखने' का न्योता दिया।

वह कहा करता - 'तुम अपने अल्ला के पास जाओगे, तो अल्ला पूछेगा, धरती पर क्या किया? जब तुम बताओगे कि न मैंने दारू पिया, न जेल गया, न रंडीबाजी की तो अल्ला बड़ी जोर से हँसेगा और दो किक मार कर इस दुनिया में दुबारा भेज देगा कि बच्चू जब कुछ किया ही नहीं फिर यहाँ कैसे आ गए।'

इसी तरह की बातें करके वह यूनुस को तैयार करता।

और एक दिन यूनुस तैयार हो ही गया।

उसने कल्लू के प्रस्ताव को एक चैलेंज माना।

हालाँकि उसका अंतर्मन इस बात के लिए तैयार न था।

कल्लू उसे आजाद नगर के उस हिस्से में ले गया जहाँ जिस्म-फरोशी होती थी।

झोंपड़ियों की कतारें। बीच में गली। ठेले पर चना, मूँगफली, नमकीन और अंडे की दुकानें। कुछ पान की गुमटियाँ। चाय-समोसे के लिए होटल एक झोंपड़ी में।

माहौल में अजीब तरह की सड़ांध। जैसे कहीं कोई जानवर मरा हो। हवा में हल्की सी नमी व्याप्त थी। बारिश का मौसम खत्म हुआ था और शरद का आगमन हो चुका था। सायंकालीन आकाश का रंग हल्का लाल, पीली और नीला था। सारे रंग धीरे-धीरे धुँधलाते जा रहे थे। लगता था कि जल्द ही आसमान पर सुरमई रंगत छा जाएगी।

कामगार काम से छूटकर घर लौट रहे थे।

झोपड़ियों के दरवाजे खुलने लगे थे।

मर्द घर के बाहर खाट डाल कर बैठने लगे थे। गाँजा-चिलम का दौर शुरू हो रहा था। दारू पीने वाले मजदूर बन-ठन कर भट्टी की ओर जा रहे थे।

झोपड़ियों में अब चूल्हे सुलगाने का उपक्रम होने लगा। मजदूर अमूमन काम से लौट आए थे। दर्रा नाले में नहाकर औरतें, मर्द और बच्चे लौट रहे थे।

दर्रा नाला एक बदनाम जगह का पर्याय बन चुका था।

लोग जानते थे कि यहाँ सुबह से शाम तक मजदूर स्त्री-पुरुषों के नहाने का कार्यक्रम निर्विघ्न चला करता है।

बीना-वासी दर्रा-नाले को 'वैतरणी' का नाम देते या फिर उसे 'राम तेरी गंगा मैली' कहते। कॉलोनी के बदमाश लड़के स्कूल से भागकर दर्रा नाला के आसपास मँडराते रहते और छुप-छुप कर नहाती स्त्रियों को देखा करते।

यूनुस सहमा-सहमा आजाद-नगर के माहौल का जायजा ले रहा था। उसके मन में भय था कि कहीं खालू का कोई साथी उसे यहाँ देख न ले, वरना शामत आ जाएगी।

वैसे भी यूनुस का खालू से छत्तीस का आँकड़ा था। खालू उसे फूटी आँख पसंद न करते।

कल्लू यूनुस का हाथ थामे एक झोंपड़ी के सामने रुका।

यह निचली छानी वाली एक मामूली सी झोंपड़ी थी। बाहर परछी थी। परछी में एक खाट बिछी थी। कल्लू ने यूनुस को परछी में खाट पर बैठने का इशारा किया। फिर वह अंदर चला गया।

यूनुस खाट पर बैठा ही था कि दो नंग-धड़ंग बच्चे उसके पास चले आए - 'मालिक, चना खाने को पैसा दो ना!'

यूनुस ने उन्हें फटकारा।

वे टरे नहीं, जिद पर अड़े रहे।

तब तक कल्लू झोंपड़ी से बाहर निकला। उसने यूनुस को परेशान करते बच्चों की पीठ पर धौल जमाई। बच्चे तुरंत रफूचक्कर हो गए।

कल्लू ने यूनुस से फुसफुसाकर कहा - 'पहले तुम जाओ, समझे।'

यूनुस क्या कहता, उसे तो अनुभव लेना था। उसने 'हाँ' में सिर हिला दिया।

उसके दिल की धड़कनें तेज हो चुकी थीं। उसने अपने सीने पर हाथ रखा। दिल बड़ी तेजी से धड़क रहा था। माथे पर पसीना चुचुआने लगा था।

हिम्मत करके वह खटिया से उठा।

कल्लू उसकी जगह खाट पर बैठ गया।

यूनुस झिझकते-झिझकते झोंपड़ी के दरवाजे के पास जाकर खड़ा हुआ।

वह टीना-टप्पर ठोंक-ठाँक कर बनाया गया एक काम-चलाऊ दरवाजा था। उसने कल्लू की तरफ देखा।

कल्लू ने आँख के इशारे से बताया कि दरवाजा ठेलकर वह घुस जाए।

यूनुस ने दरवाजे को धक्का दिया। दरवाजा खुल गया।

अंदर लालटेन की मद्धम रोशनी थी।

वह अंदर पहुँचा तो उसने देखा कि कोने में एक चारपाई है और जमीन पर भी बिस्तर बिछा है।

जमीन के बिस्तर पर एक अधेड़ महिला बैठी है। ठीक उसकी खाला की उम्र की महिला। उसने सिर्फ लहँगा और ब्लाउज पहन रखा है। वह एक छोटे से आईने को एक हाथ से पकड़े अपने होठों पर लिपिस्टिक लगा रही है।

यूनुस को देखकर उसने उसे खटिया पर बैठने का इशारा किया।

यूनुस का मन वितृष्णा से भर उठा।

उसकी रंगत साँवली थी जो लालटेन की मद्धम रोशनी में काली नजर आ रही थी।

महिला ने उसे एक बार फिर गौर से देखा और हँसी। यूनुस ने देखा कि उसके सामने के दो दाँत टूटे हैं।

लालटेन की धुँधली रोशनी में उसका हँसता चेहरा किसी चुड़ैल की तरह नजर आया।

यूनुस को उबकाई आने लगी।

अभी तक उसने कोठा देखा था तो सिर्फ सिनेमा में। जहाँ वेश्याओं का रोल नामी-गिरामी हीरोइनें किया करती हैं। रेखा, माधुरी दीक्षित, तब्बू, करिश्मा कपूर, रवीना आदि हीरोइनें जब वेश्याएँ बनती हैं तों कितनी खूबसूरत दिखा करती हैं। एक से बढ़कर एक हीरो इन वेश्याओं के दीवाने होते हैं। अरे, 'मंडी' पिक्चर में भी वेश्याएँ कितनी खूबसूरत थीं।

आजाद नगर में तो सारा हिसाब ही उल्टा-पुल्टा है।

महिला यूनुस के पास आकर खाट पर बैठ गई।

उसने ब्लाउज के बटन खोलते हुए कहा - 'लेट नहीं, जल्दी करो। जादा टैम नहीं लेना।'

ब्लाउज के बटन खुले और... यूनुस को काटो तो खून नहीं।

वह तब तक बेहद घबरा चुका था।

अभ्यस्त महिला जान गई कि बालक नर्वस है। उसने यूनुस का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा।

यूनुस ने उसके हाथ की सख्ती महसूस की। वह एक खुरदुरा-पथरीला हाथ था।

यूनुस की रही-सही ताकत जवाब दे गई।

उसने महिला से हाथ छुड़ाया और उठते हुए बस इतना ही कहा - 'थोड़ा बाहर से होकर आता हूँ।'

और बिना देर किए कमरे से बाहर निकल आया।

कल्लू ने सवालिया निगाहों से उसे देखा और इशारों में पूछा - 'हो गया!'

यूनुस ने इशारे में बताया - 'हाँ!'

फिर कल्लू अंदर घुसा तो यूनुस तत्काल उस आजाद नगरी से नौ-दो ग्यारह हो गया।

उसके बाद उसने कल्लू की दोस्ती भी छोड़ दी थी।

पाँच

चाय कब खत्म हुई, वह जान न पाया।

एक रुपए की एक कप चाय वह पी चुका था और उसे उस चाय की तासीर का इल्म भी न हुआ।

यूनुस को सनूबर 'चहेड़ी' कहती।

खालू चाय के दुश्मन हैं। चाय को खालू जहर कहा करते। खाला चाय की बेहद शौकीन थीं। खाला के घर के अजीब हालात थे। खालू जिस चीज के खिलाफ होते, खाला उस काम को धड़ल्ले से करतीं। खालू बड़बड़ाते तो खाला तिरस्कार से हँसतीं।

यूनुस का मन उस एक कप चाय से न भरा।

उसने होटल वाली से एक और कप चाय के लिए कहा।

केतली में चाय बची थी।

महिला उसे कप में ढालने लगी तो यूनुस ने उसे टोका - 'ठंडा गई होगी। तनि गरमा लेई।'

केतली की चाय को महिला ने भट्टी पर गरमाया।

फिर उसके लिए चाय कप में न ढाल कर काँच के गिलास में ढाली।

यूनुस ने देखा कि चाय की मात्रा एक कप से ज्यादा है।

गिलास देते वक्त यूनुस ने महसूस किया कि महिला ने अपनी अँगुलियों का स्पर्श होने दिया है। वह मुस्कराया।

इस बार की चाय ने उसे तृप्त किया।

उसने सोचा अब सिंगरौली स्टेशन की ठंड उसका बाल बाँका नहीं कर सकती।

चाय के पैसे देने लगा तो छुट्टा वापस करते हुए पूछा - 'कहाँ तक जाना है?'

यूनुस क्या बताता। हर बार तो वह ऐसे ही निकल पड़ता है, बिना गंतव्य के बारे में जाने। इस बार भी वह एक अंधी छलाँग लगा रहा है। हाँ, ये जरूर है कि ये छलाँग बिना बैसाखी के वह लगाएगा। वह स्वयं दौड़ेगा। फिर निशान देख कर कूद पड़ेगा। अब कितनी दूर तक उसकी छलाँग रहेगी ये तो वक्त बताएगा। उसे डर था कि कहीं रेफरी उसकी छलाँग को 'फाउल' न करार दे दे।

छुट्टा जेब में रखते हुए उसने महिला के प्रश्न का सहज उत्तर दिया - 'कटनी!'

सच भी है।

पहले तो उसे कटनी ही जाना है।

उसके बाद ही आगे की गाड़ी पकड़नी होगी।

वह वापस स्टेशन लौट आया।

प्लेटफार्म पर रनिंग-स्टाफ रूम के बाहर जलाई गई आग के पास ही उसने खड़ा होना उचित समझा।

स्टाफ अब बतिया नहीं रहे थे। लगता है गप्पें मारते-मारते वे थक गए होंगे। अब वे ऊँघ रहे थे। उनके नीले ओवरकोट फर्श पर लिथड़ा रहे थे। उन्हें नींद सता रही थी।

यूनुस एक पेटी पर बैठ गया, जिसके साइड में लिखा था - 'ए बी दास, गार्ड'।

आँच में अब जान नहीं थी।

नया कोयला डालने पर ही कुछ ताप बढ़ता।

यूनुस ने स्वेटर के ऊपर विंड-चीटर पहन रखा था।

घर से निकला तब रात के नौ बजे थे। वातावरण काफी ठंडा हो गया था।

उसे हाथ और कानों में अधिक ठंड लगती थी।

बीना से औड़ी-मोड़ तक तो वह बस से आ गया। फिर औड़ी-मोड़ में उसे अगले साधन के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ी। सिंगरौली के लिए बनारस से बस आती है।

औड़ी-मोड़ इस इलाके की सबसे ठंडी जगह है।

उसे बस का बेसब्री से इंतजार था। वह चाहता था कि जल्दी से जल्दी खालू की पहुँच से दूर निकल जाए। कहीं उनका कोई साथी उसे यहाँ सफर करते रंगे-हाथ पकड़ न ले।

इसीलिए वह आरटीओ चेक-पोस्ट के पास जाकर खड़ा हो गया। यहाँ बस रुकती है।

बस आई तो उसे कुछ राहत मिली।

यह उत्तर-प्रदेश राज्य परिवहन निगम की बस थी।

लगता है राबर्ट्सगंज डिपो की बस थी। तभी तो एकदम खड़खड़ा रही थी।

बस के अंदर ठंड से बचने का सवाल न था। खिड़कियों के शीशे गायब थे। जिन खिड़कियों में शीशे थे भी तो वे ढंग से बंद न होते। पूरी बस में ठंडी हवा के तीर चल रहे थे।

यूनुस के हाथ और कान ठंडाने लगे और उसे सनूबर की याद हो आई।

उसने तत्काल अपने विंड-चीटर के जेब की तलाशी ली।

वाकई, सनूबर के दिल में उसके लिए एक कोना सुरक्षित है। वह अपना कर्तव्य भूली न थी। विंड-शीटर के एक जेब में सनूबर के हाथों से बुना दस्ताना था, और दूसरे में मफलर।

उसने दास्ताने पहने और जब मफलर से कान लपेटे तो लगा कि सनूबर अदृश्य रूप में उसकी सहयात्री है।

यूनुस भाग रहा था।

वह भाग रहा था, बहुत कुछ पाने के लिए और खो रहा था सनूबर का साथ।

वाकई सनूबर है कि वह जिंदा है। उसने ही यूनुस के दिल में जिंदगी के चैलेंज को स्वीकार करने की इच्छा जगाई है।

सनूबर ने ही उसकी अंतरात्मा को ललकारा था कि यूनुस, जागो! दुनिया में कुछ कर दिखाना है तो समाज में पहले अपनी 'कुछ हटके' पहचान बनाओ!

वरना एक समय तो वह इतना हताश हो गया था कि उसे जीवन से मोह नहीं रह गया था। उसे ऐसा लगता था कि इतनी कम उम्र में इतने अपमान, इतने दुख उठाने से अच्छा है कि वह आत्महत्या कर ले।

वह दोस्तों के बीच और कभी-कभी खाला के सामने अक्सर कहता भी था कि जी करता है मर जाऊँ तो मुक्ति मिले।

मुक्ति...

लेकिन किससे?

जीवन से या कि दिन-प्रतिदिन के उलाहनों-तानों से?

लेकिन जीवन उसे सनूबर के रूप में अपने पास बुलाता - 'तुम मेरे हो। तुम्हें मेरी खातिर जीवित रहना है।'

जाने कैसे सनूबर इतनी संजीदा बातें बोलना सीख गई है।

स्कूल जाती है न!

सहेलियों के बीच उठती-बैठती है।

घर में 'ब्लैक एंड व्हाइट' टीवी है। उसका चैनल बदल-बदल कर हिंदी फिल्मों और धारावाहिकों से यही सब तो सीखते हैं कॉलोनी के बच्चे।

एक और डायलाग जो यूनुस को अच्छा लगता - 'मैं तुम्हारा इंतजार करूँगी! तुम्हें मेरी खातिर आना होगा, यूनुस...'

वो मुहम्मद रफी का एक गाना है ना -

'हम इंतजार करेंगें तेरा कयामत तक

खुदा करे कि कयामत हो और तू आए।'

सनूबर की आँखें बड़ी-बड़ी हैं।

जब वह भावनाओं के बहाव में डूब-उतरा रही हो तब आँखें अधखुली रहतीं।

खोई-खोई सी, शून्य में ताकती आँखें।

सनूबर अभी कक्षा आठ की छात्रा ही तो है।

चौदह साल की उम्र में इतनी बड़ी बात...

'मेरी खातिर' और 'मैं तुम्हारा इंतजार करूँगी!'

प्रेमातिरेक में डूबी भावुक बातें!

सनूबर कई बातों में अपने खानदान से कुछ हट के नजर आती।

गोरी-चिट्टी सनूबर वाकई अपने भाई-बहनों के बीच अलग दीखती। उसके नैन-नक्श अपनी माँ पर हैं। गोलाकार चेहरा, संतुलित बनावट, माथा कम चौड़ा और लंबे बाल।

खालू की परछाईं भी नहीं पड़ी जरा सी।

यदि वह खालू या उनके खानदान के किसी का साया पड़ा होता तो उसकी बड़ी-बड़ी आँखों की जगह अंदर की ओर धँसी हुई गोल कटोरियाँ होतीं।

पतले होठों की जगह खालू की तरह मोटे और ऊपर की तरफ पल्टे हुए बेढंगे से होंठ होते।

सनूबर खाला-खालू की पहली संतान थी।

खालू भारतीय सेना की नौकरी पर थे तब सनूबर का जन्म हुआ था।

सैनिकों के बीच वयस्क मजाक हुआ करते। यदि सैनिक यूपी-बिहार का है और उसके बाप बनने की खबर आती तो हल्ला होता कि फलाँ ने अपना लँगोट गाँव भेज दिया था, सो बच्चा हो गया है।

यदि वह इन दोनों प्रांत छोड़ किसी अन्य प्रांत का है तब कहा जाता कि सैनिक को 'पत्र-पुत्र' की प्राप्ति हुई है।

यानी घर से पत्र द्वारा सूचना आना कि फला सैनिक बाप बन गया है।

खालू तब राजस्थान बार्डर पर थे, जब उन्हें पत्र द्वारा सूचना मिली कि वे पहली संतान के पिता बन गए हैं।

लेकिन ये बात खालू बखूबी जानते थे कि सनूबर के रूप में 'पत्र-पुत्री' ही तो मिली है।

यूनुस को इन सबसे क्या? वह जानता था कि सनूबर एक अच्छी लड़की है। देखने-सुनने में ठीक है। पढ़-लिख रही है। घर का काम-काज ठीक-ठाक निपटा लेती है। कुरआन पाक की तिलावत कर लेती है। रमजान माह में उन खास दिनों के अलावा बाकी के रोजे पूरे रखती है। नमाज यदा-कदा पढ़ लेती है।

रिश्ते में सनूबर और यूनुस भाई-बहिन थे।

खालाजाद भाई-बहिन!

यूनुस ये भी जानता था कि इस्लामी समाज में ये रिश्ता प्रेम या शादी के लिए बाधक नहीं!

छह

यूनुस ने अपनी अम्मा के मुँह से खाला के बारे में कई बातें सुनी हैं।

खाला तब तेरह बरस की थीं, जब उनका ब्याह हुआ था।

यूनुस की अम्मा खाला से दो-तीन साल बड़ी थीं।

यूनुस का ननिहाल बेहद गरीबी में अपने दिन काटा करता था। असुविधाओं और घोर अभावों के बीच खाला और अम्मा पली-बढ़ीं।

उनके पिता मूलतः चरवाहा थे।

अपने गाँव और आस-पास के एक-दो गाँव वालों की बकरियाँ चराते थे।

यूनुस के नाना का नाम था जहूर मियाँ।

पतली-दुबली काया, हाथ-पैर किसी पेड़ की टहनी जैसे टेढ़े-मेढ़े, पिचके गालों पर झुर्रियाँ, ठुड्डी पर थोड़े से काले-सफेद बाल, मूँछें सफाचट, और गंजे सिर पर लपेटा गया गमछा। वह गमछा हमेशा उनके साथ रहता। बदन पर वह एक लट्ठे के कपड़े की बंडी और नीचे चौखाने वाला तहमद पहनते। जहूर मियाँ के कपड़े सप्ताह में दो बार धुलते।

खाला का नाम सकीना था।

यूनुस की अम्मा का नाम अमीना।

अम्मा बताती हैं कि खाला बचपन से ही बड़ी झगड़ालू थीं। वह गाँव के लड़कों को पीट दिया करती थीं। लड़के उनसे सीधा-सीधा लड़ने से घबराते। बोलते, ये सकीना मुसल्ली बड़ी बदमाश है। उससे निपटना हो तो उस पर चोरी से वार करो। लड़के मंसूबे बनाते रह जाते और अक्सर पिट जाते।

ऐसी दुष्ट लड़की थीं खाला।

सलवार-कुर्ता साल में एक बार बनता, ईद के मौके पर। एक जोड़ी कपड़ा पिछले साल का और एक नए साल का। बस यही दो जोड़ी कपड़े हुआ करते थे। हाँ, दो बहनों के नए-पुराने कपड़ों को अगर एक कर दिया जाए तो इस तरह चार जोड़ी कपड़े हो जाते थे। नहाने-धोने के लिए पिता का तहमद बदन लपेटने के काम आ जाता।

गाँव में तीन कुएँ थे। एक तो बामनों का था। एक कुर्मियों का और तीसरे कुएँ का पानी मुसलमान और छोटी जाति के लोग इस्तेमाल करते। फिर प्राथमिक विद्यालय के प्रांगण में एक हैंड-पंप भी लग गया था।

पीने का पानी कुएँ से आता और नहाने-धोने के लिए वे गाँव के बाहर से बहने वाली पहाड़ी नदी जाया करते थे। जहाँ आराम से खाला और अम्मा अपनी सहेलियों के संग नहाया करतीं।

यूनुस की नानी बीमार रहा करतीं। उन्हें खून की उल्टियाँ होतीं। गाँव में टीबी जैसी बीमारी का नाम लोग मुँह में न लाते। भूत-जिन्न-चुड़ैल के प्रकोप ही सारी बीमारियों के कारण हुआ करते। सयाने हर विपत्ति का हल गंडे-तावीज, तंत्र-मंत्र और रिद्धि-सिद्धि के जरिए करते। गाँव में जगह-जगह देवताओं के चौतरे बने थे।

पिता जहूर मियाँ जड़ी-बूटियों के स्वयंभू विशेषज्ञ थे। जंगल में बकरियाँ चराते-चराते उन्हें न जाने कितनी जड़ी-बूटियों की जानकारी हो गई थी। वह साँप-बिच्छी काटने का मंत्र भी जानते थे। अपनी पत्नी के इलाज के लिए वह अजीबो-गरीब जड़ियाँ घर लाते। उन्हें स्वयं कूटते-छानते। उनका अर्क निकालते और पत्नी का इलाज करते।

जुमा की नमाज पढ़ने कस्बे जाते तो बड़े हाफिज्जी से मिन्नतें करके पत्नी के लिए ताबीज ले आते। इन सब टोने-टोटकों के कारण या फिर आयु-रेखा के कारण माँ की तबीयत कभी नरम होती कभी गरम। वह असमय मर गईं।

कहने को तो माँ ने पाँच बच्चे जने, लेकिन बचे सिर्फ तीन ही।

यूनुस की अम्मा बतातीं - 'अम्मा जादे दिन नहीं जिंदा रहीं। नहीं तो हम लोग ऐसे यतीम न होते।'

यूनुस के एकमात्र मामा गँजेड़ी-शराबी निकल गए।

अपने आँगन में गाँजा के पौधे रोपने के अपराध में जेल भी काट आए हैं। उन्होंने विधिवत शादी-ब्याह किया नहीं। गाँव की एक केवटिन को संग रखे हैं, सो उनसे बहनों ने रिश्ता तोड़ लिया है। जात-बिरादरी से उन्हें 'बैकाट' कर दिया गया है। कहते हैं केवटिन के पहले मर्द से हुए बच्चों को वही पालते हैं। उनके घर में मुसलमानों का कोई परब-त्योहार नहीं मनाया जाता। हाँ, दीवाली, होली, खुजलइयाँ, रामनवमी आदि परब मनाए जाते हैं।

यूनुस के नाना जहूर मियाँ के मरने के बाद यूनुस की अम्मा और खाला एक बार उनके चहल्लुम के अवसर पर गाँव गई थीं।

तब मामा और उस केवटिन मामी ने उनकी खिदमत तो दूर यूनुस के अब्बा और खालू की भी कोई आव-भगत न की। खालू वैसे भी क्रोधी स्वभाव के व्यक्ति ठहरे। मिलिटरी के सैनिक। इतना गुस्साए कि खाला को तलाक देने की धमकी तक दे डाली। वो तो अब्बा के एक दोस्त बगल के गाँव में रहते थे। वह मिल गए और खालू को अब्बा वहीं ले गए। तब जाकर कहीं उनका गुस्सा ठंडाया था। फिर भी उन्होंने जीते जी उस गली में दुबारा कदम न रखने

की कसम खा ही ली थी। किसी तरह चहल्लुम की फातिहा कराकर वे लोग जो वहाँ से लौटे तो फिर दुबारा उधर का रुख न किया।

मामा मरे चाहे चूल्हे में जाए।

यूनुस की अम्मा की शादी कोतमा में हुई। यूनुस के अब्बा तब घूम-घूम कर अखबार बेचा करते थे। जहूर मियाँ को बड़े हाफिज्जी ने इस रिश्ते की जानकारी दी थी। बताया था कि लड़का यतीम जरूर है किंतु पढ़ा-लिखा है। उसमें कोई ऐब नहीं। न कहो कभी बीड़ी पी लेता है। हाँ, खुद्दार है। स्वयं कमाता है। वहीं मदरसे में पला-बढ़ा है।

फिर बड़े हाफिज्जी ने मश्विरा दिया - 'तुम कहो तो वहाँ के इमाम से इस मंसूब के लिए बात करूँ। अल्लाह चाहेगा तो बात बन भी सकती है।'

नाना ने हामी भर दी।

और इस तरह बात पक्की हुई और फिर उनका निकाह भी हो गया।

शादी के बाद पुरुष की किस्मत बदलती है।

यह बात अब्बा पर भी चरितार्थ हुई।

उन्हें सिंचाई विभाग में अस्थायी चपरासी की नौकरी मिली।

उनमें पढ़ने की लगन तो थी ही।

प्राइवेट तौर पर हाई स्कूल की परीक्षा में बैठे।

उस साल परीक्षा केंद्र में जम कर नकल हुई।

अब्बा पास हो गए और इस पढ़ाई के बदौलत वहीं तरक्की पाकर बाबू बन गए।

'डिस्पेच क्लर्क'।

ठेकेदार के मुंशी वगैरा आते और चिट्ठी-पत्री पाने के लिए खर्चा करते।

इससे थोड़ी बहुत ऊपरी आमदनी भी हो जाती थी।

राज्य-सरकार की नौकरी में वैसे भी तनख्वाह काफी कम थी।

कहते हैं कि अम्मा की शादी के बाद खाला भी पिता जहूर मियाँ को अकेला छोड़कर कोतमा अपनी बड़ी बहिन के ससुराल आ गईं।

शायद इसीलिए अब्बा मूड में रहते हैं तो कहते हैं कि एक ठो साली के अलावा मुझे दहेज में कहाँ कुछ मिला। ठग लिया ससुरे ने।

यूनुस ने अपनी अम्मा के मुँह से सुना कि खाला रोया करतीं और अल्लाह से दुआ माँगती कि अल्लाह मियाँ, या तो हमें अपने पास बुला लो या फिर हमरा निकाह करवा दो।

अब्बा और अम्मा के प्रयासों से पास के गाँव की विधवा के इकलौते बेटे से खाला का निकाह हुआ।

खालू फौज में नौकरी करते थे।

खालू की अंधी-बूढ़ी विधवा माँ कतई नहीं चाहती थीं कि उनका लख्ते-जिगर, नूरे-नजर, कुलदीपक पुत्र फौज में भरती होकर जान जोखिम में डाले।

इसीलिए खालू ने अपनी माँ से चोरी-छिपे भरती-अभियान में भाग लिया।

कद-काठी तो ठीक थी ही।

गाँव का खेला-खाया जिस्म।

उनका चयन कर लिया गया था।

वे जानते थे कि माँ राजी न होंगी, सो उन्हें बिना बताए नौकरी ज्वाइन कर ली।

जब ट्रेनिंग के लिए बुलावा आया तो माँ को पता चला।

बेटे की जिद के आगे माँ झुकी।

बूढ़ी विधवा ने बेटे को घर से बाँधने के लिए युक्ति सोची। लगी अपने चाँद से बेटे के लिए कोई हूर-परी सी बहू।

इधर-उधर बात चलाई।

फिर जहूर मियाँ की बेटी के बारे यूनुस के अब्बा से जानकारी मिली तो जैसे उनकी मन की मुराद पूरी हुई।

सोचा गरीब घर की लड़की है। दिखावा न करेगी और बेटे की गृहस्थी की गाड़ी को ढंग से खींच ले जाएगी।

सो उन्होंने हामी भर दी।

खाला की उम्र तब तेरह-चौदह की होगी और खालू की चौबीस-पच्चीस।

वैसे कायदे से देखा जाए तो जोड़ी बेमेल थी।

लेकिन गाँव-गिराँव की लड़कियाँ अल्पायु में ही वैवाहिक जीवन की बारीकियाँ जान-समझ जाती हैं।

अरहर के खेत, नदी-नाले के घाट, पनघट-पगडंडी आदि में वे यौन क्रियाओं के गूढ़ सबक सीख जाती हैं।

बकरियाँ चराते-चराते खाला भी कुछ ज्यादा उच्छृंखल हो चुकी थीं।

कहते हैं कि उनके कई आशिक थे।

वह बहुत होशियार थीं।

लाइन सभी को देती थीं, किंतु एक सीमा तक... बस्स!

हाँ, ममदू पहलवान की विनय के आगे उनकी एक न चलती, खाला इस तरह पिघलतीं, जैसे आग के आगे बर्फ।

विवाह के बाद खालू कुछ दिन गाँव में रहे।

खाला के तब दिन दशहरा और रात दीवाली हुआ करती थी।

फिर जैसे ही छुट्टियाँ खत्म हुईं, खाला की आँखों में आँसू देकर खालू फौज में वापस लौट गए। उन्होंने सुहागरात में खाला से कई वादे करवाए।

जैसे कि उनकी विधवा माँ की देखभाल के लिए उन्होंने विवाह किया है, इसलिए उनकी देखभाल में कोई चूक न हो।

जैसे कि वे घर में अकेले हैं, गाँव में तमाम खेती योग्य भूमि है, उसे इस्तेमाल लायक बनाया जाए ताकि फौज से रिटायरमेंट लेकर जब वह लौटें, तब आराम से खेती-किसानी करके दिन गुजारे जाएँगे।

जैसे खालू को अपनी और घर की इज्जत से प्यार है, खाला से ऐसा कोई कदम न उठे, जिससे इस घर की मर्यादा पर बट्टा लगे।

खाला प्रेम की पींगें झूलती हर बात पर 'हाँ' कह देतीं।

उन्हें क्या मालूम था कि वादा करना आसान है और उसे निभाना कितना कठिन होता है।

खालू के फौज में वापस लौटते ही उनका मन ससुराल में न लगा।

बूढ़ी अंधी सास बड़ा हुज्जत करती।

बात-बात पर टोकती।

वैसे भी खाला एक आजाद पंछी की तरह अपने मैके में पली-बढ़ी थीं। उन्हें किसी का अंकुश या लगाम कहाँ बर्दाश्त होता।

सास की कल-कल से तंग आकर एक दिन वे अपने मैके चली गईं।

खालू की अनुपस्थिति में उनके अधिकतर दिन मैके में ही गुजरे। विवाह हो जाने के बाद ममदू पहलवान से उनका इश्क अब बेधड़क चल निकला। उनके प्रेम की गाड़ी पटरी या बिना पटरी के भी धकाधक दौड़ने लगी।

सात

खालू जब तक बाहर रहते, खाला ज्यादातर अपने मैके में रहती थीं।

खालू के गाँव में पीने का पानी की तकलीफ थी। निस्तार के लिए तो गाँव के बाहर तालाब मे लोग पहुँचते थे। गाँव के बड़े गृहस्थ पटेल के घर एक कुआँ था। उसमें साल भर पानी रहता। खालू की फौज की कमाई से खालू की वृद्धा माँ ने एक कुआँ खुदवाया था, जिसमें जेठ महीना छोड़ साल भर पानी रहता था। बुढ़िया ने सोचा था कि बहू आएगी तो उसे आराम रहेगा।

लेकिन बहू को कहाँ थी सास की चिंता।

वह तो सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए जिंदा थी।

खालू छुट्टियों पर आते तो एक-दो दिन गाँव में रहते, फिर उनका मन उचट जाता। फौज में परिवार की कमी तो खलती है, वरना फौज जैसा सुख और कहाँ?

खालू किसी न किसी बहाने बूढ़ी माँ को मना कर अपने ससुराल चले जाते। वहाँ जाकर खाला के मोहपाश में ऐसा बँधते कि फिर उन्हें दीन-दुनिया का होश न रहता। वे ये भी भूल जाते कि उन्हें फौज में वापस भी जाना है।

खाला के रेशमी रूप का जादू और समर्पण की पेशेवराना अदा का मर्म खालू कहाँ समझ सकते थे। अकाल-ग्रस्त आदमी भूख की शिद्दत में कहाँ तय कर पाता है कि दिया गया खाना जूठा है या बासी। वह तो ताबड़-तोड़ पेट की आग बुझाने में जुट जाता है।

खालू की बूढ़ी माँ इसी गम में असमय मर गईं कि उस रंडी, छिनाल बहुरिया ने उसके बेटे पर जाने कैसा जादू कर दिया है। उसके इकलौते बेटे पर उस जादूगरनी ने ऐसा टोना किया कि वह अपनी बूढ़ी माँ को एकदम भूल गया।

सनूबर का जन्म उसके ननिहाल में हुआ।

कई दिन बाद बूढ़ी सास को सूचना मिली कि वह दादी बन गई हैं।

उनकी बहू ने एक लड़की पैदा की है। ये खबर पाकर बुढ़िया ने अपना माथा पीट लिया था।

फिर भी लोक-मर्यादा का लिहाज कर रिश्ते के एक भतीजे को साथ लेकर वह बहू के मैके गईं।

खाला छठी नहा चुकी थीं।

वे आँगन में खाट पर बैठी सनूबर के बदन की मालिश कर रही थीं।

बुढ़िया सास को देख उनका माथा ठनका।

फिर भी उन्होंने सलाम किया और दोनों को पैरा से बने मोढ़े पर बिठाया।

घर में उनके भाई न थे। केवटिन भाभी भर थी।

खाला ने उन्हें आवाज लगाई।

खालू की बुढ़िया माँ ने उन्हें किसी को बुलाने से मना कर दिया।

वैसे भी उस घर में वे खाना-पानी नहीं पी सकती थीं, क्योंकि खाला के भाई ने एक कुजात को अपनी ब्याहता बनाकर रखा है।

बस उन्होंने इतना ही कहा कि एक बार नवजात बच्ची को प्यार करेंगी और फिर चली जाएँगी। हाँ, यदि यहाँ कोई तकलीफ हो तो बहू भी चाहे तो साथ चल सकती है।

सनूबर अपनी दादी की गोद में आकर खेलने लगी।

दादी ने अपने भतीजे से पूछा - 'किस पर गई है बच्ची?'

भतीजा कैसे निर्णय लेता कि बच्ची किस पर गई है।

उसे तो बच्ची सिर्फ रूई का गोला लग रही थी।

हाँ, फिर भी उसने उस बच्ची के चेहरे की कुछ विशेषता बुढ़िया को बताने लगा।

तभी घर में ममदू पहलवान आ गया।

भतीजे ने जो ममदू पहलवान को देखा तो उसे ऐसा लगा कि जैसे बच्ची का चेहरे की बनावट कहीं उस पहलवान से तो नहीं मिलती है?

भतीजा अभी नादान था।

उसने ऐसे ही कह दिया कि इन चचा जैसी तो दिखती है ये लड़की।

खाला के चेहरे का रंग उड़ गया।

ममदू पहलवान के तो जैसे पैरों तले जमीन निकल गई।

भतीजे को क्या पता था कि उसने क्या कह दिया?

बस, फिर क्या था। बुढ़िया सास ने अपने अंधेपन को कोसा और भतीजे से कहा कि तत्काल वापस चले।

उन्होंने वहीं अपनी बहू को खूब खरी-खोटी सुनाई।

बेटे को सारी बात बताने का संकल्प लिया।

वह इतना नाराज न होतीं यदि उनकी छिनाल बहू ने पोता जना होता या उस नवजात शिशु के नैन-नक्श ददिहाल या ननिहाल किसी पर होते।

बुढ़िया माँ हमेशा ताने दिया करतीं कि उसके बेटे के साथ उस चुड़ैल बहू ने छल किया है। वह बदचलन है। वह बेवा बिचारी क्या करें, उस चुड़ैल ने तो उनके बेटे पर जादू किया हुआ है। उसके गबरू जवान बेटे को नजरबंद करके रखा हुआ है।

लेकिन ये भी सच है कि खालू को इतनी संतानों का पिता कहलाने का गौरव खाला ही ने तो उपलब्ध कराया है।

इसी बात पर वह अपनी सास को प्रताड़ित किया करती - 'अगर तुम्हारे बिटवा जैसे मउगे-फउजी के भरोसे रहती तो इस खानदान में ईंटा-पथरा भी न हुआ होता। फिर देखते कैसे चलता तेरा वंश!'

फौज का खाया-पिया जिस्म खाला के आगे बौना हो जाता।

नतीजतन खालू जिस बच्चे को सामने पाते, पीट डालते।

यूनुस सब जानता समझता था। वह ये भी जानता था कि दुधारू गाय की लात भी प्यारी होती है। खाला जो खालू की चोरी और कभी सीनाजोरी में अपने गरीब खानदान वालों की माली मदद करती हैं, उसके आगे लोग उनके गुनाह नजरअंदाज कर देते हैं।

इसी तरह खाला सभी की कोई न कोई मजबूरी जानती। उनसे जुड़े तमाम लोग उनके एहसानों के बोझ तले दबे हुए हैं।

खालू को खाला एक पालतू जानवर बना कर रखतीं।

खालू जब कभी गुस्साते तो बच्चों को मारते-पीटते। खाने की थाली पटकते। तमतमाए खालू घर से निकल जाते। लेकिन उनका गुस्सा ज्यादा देर तक टिकता नहीं। जल्द ही वह खाला की लल्लो-चप्पो करने लगते।

आठ

ऐसी बात नहीं है कि खालू की बूढ़ी माँ कलकलहिन थी या कि खाला पर कोई झूठा इल्जाम लगाया गया था।

यूनुस को भी खाला की गैर-जरूरी चंचलता पसंद न आती। उसे लगता कि एक उम्र के बाद इंसान को गंभीर हो जाना चाहिए।

खाला जब गैर मर्दों से ठिठोलियाँ करतीं तो यूनुस का दिमाग खराब हो जाता।

यूनुस अक्सर खाला की दिनचर्या के बारे में सोचा करता। खाला जमाने से बेपरवाह सिर्फ अपनी ही धुन में लगी रहतीं। लगता उन्हें किसी प्रकार की कोई चिंता ही न हो। सिर्फ अपने लिए जीना...

सुबह उठते ही सबसे पहले खाला आईने के सामने आ खड़ी होतीं।

होंठ पर बह आए लार और आँख की कीचड़ गमछे के कोर साफ करतीं।

अपने बिखरे बालों को सँवारतीं।

चेहरे को कई कोणों से देखतीं।

फिर आँगन में जाकर टंकी के पानी से कुल्ला करतीं और चेहरे पर पानी के छींटें मारकर तौलिए से रगड़कर चेहरा साफ करतीं।

उसके बाद टूथ-ब्रश में ढेर सारा पेस्ट लगाकर बाहर आँगन में आ जातीं। टूथ-पेस्ट खालू मिलेटरी कैंटीन से लाया करते थे।

बाहर फाटक के पास खड़े होकर अड़ोस-पड़ोस की झाड़ू बुहारती औरतों से गप्प का पहला दौर चलातीं। जिसमें बीती रात के मनगढ़ंत अनुभवों पर दाँत निपोरा जाता। पेस्ट से उत्पन्न झाग क्यारी में थूकते हुए खाला तेज आवाज में हँसतीं।

खाला का सीना और कूल्हे भारी हैं।

बिना अंतर्वस्त्रों के मैक्सी के लबादे में उनके जिस्म के उभार-उतार स्पष्ट दीखते।

खाला का मैक्सी पहनना यूनुस को फूटी आँख न भाता। वैसे भी उनका जिस्म किसी ढोल के आकार का था। ऐसे जिस्म पर सलवार-कुर्ता या फिर साड़ी ठीक रहती। मैक्सी वैसे तो तन ढाँपने का विकल्प होता है। ठीक है कि उसे रात में सोते समय पहना जाए या फिर घर के काम-काज करते हुए जिस्म पर डाल ले इंसान। किसी पराए मर्द के सामने या फिर घर से बाहर निकलने की दशा में इंसान को शालीन पोशाक पहननी चाहिए। या फिर मैक्सी जरूरी ही हो तो किसी के सामने आने से पूर्व दुपट्टा डाल लेना चाहिए।

सनूबर को भी अपनी मम्मी का ये पहनावा पसंद न आता। वह अक्सर उन्हें टोका करती कि मम्मी मैक्सी पहन कर बाहर न निकला करो। मैक्सी तो बेडरूम-ड्रेस होती है।

लेकिन खाला किसी की सही सलाह मान लें तो फिर खाला किस बात की!

मुँह धोने के बाद खाला किचन की तरफ जातीं, जहाँ सनूबर के संग नाश्ता बनाने लगतीं।

नाश्ता-वास्ता के बाद सनूबर बर्तन धोने भिड़ जाती और खाला टंकी के पास टब भर कपड़े लेकर बैठ जातीं। कपड़े धोने के बाद वे वहीं नहाने लगतीं। खाला बाथरूम में कभी नहीं नहाया करतीं थी।

नहा-धोकर खाला बेड-रूम आ जातीं। फिर श्रृंगार-मेज और आलमारी के दरमियान उनका एक घंटा गुजर जाता।

इस बीच सनूबर बर्तन धोकर नहा लेती और स्कूल जाने की तैयारी करने लगती।

तभी खाला की आवाज गूँजती - 'अरे हरामी, हीटर में दाल चढ़ाई है या अइसे ही स्कूल भाग जाएगी?'

सनूबर स्कूल ड्रेस पहने बड़बड़ाती हुई किचन में घुसती और कुकर में दाल पकने के लिए चढ़ा देती।

कुकर पुराना हो चुका है, उसका प्रेशर ठीक से बनता नहीं, इसलिए उसमें दाल पकने मे समय लगता है।

सभी बच्चे स्कूल चले जाते और खाला बन-ठन कर बाहर निकल आतीं।

तब तक एक-दो पड़ोसिनें भी खाली हो जातीं।

फिर उनमें गप्पें होतीं तो समय जैसे ठहर जाता।

एक-दो बच्चे हॉफ-टाइम पर घर आते तो भी खाला टस से मस न होतीं। बच्चे स्वयं खाने का सामान खोजकर खाते।

दुपहर के एक बजे के आस-पास औरतों की सभा विसर्जित होती।

घर आकर खाला भात के लिए अदहन चढ़ातीं और जल्दी-जल्दी चावल चुनने बैठ जातीं। चावल पसाकर फुर्सत पातीं, तब तक चिट्टे-पोट्टे स्कूल से लौटने लगते। दुपहर के खाने में सब्जी कभी बनी तो ठीक वरना अचार के साथ दाल-भात खाना पड़ता। देहाती टमाटर के दिनों में सनूबर जब स्कूल से लौटती तो खालू के लिए टमाटर की चटनी सिल में पीसती थी।

दुपहर खाना खाकर खाला टीवी देखते-देखते सो जातीं।

शाम को नींद खुलती तो फिर वही आईने के सामने वाला दृश्य दुहरातीं।

फिर फ्रेश होकर साड़ी-ब्लाउज पहनतीं। साड़ी पहनने का उनका सलीका किसी अफसराइन की तरह का होता। चेहरे को पाउडर-लिपिस्टिक-काजल से सजातीं।

तब तक उन्हीं की तरह उनकी कोई सहेली आ जाती और उसके साथ बाजार निकल जातीं। सब्जियाँ या अन्य सामान वह स्वयं खरीदा करतीं थीं।

खालू तो गेहूँ पिसवाने और चावल-दाल लाने जैसे भारी काम करते।

सात-आठ बजे तक खाला लौटतीं।

फिर सनूबर के साथ बैठकर रात के खाने की तैयारी में लग जातीं।

इस बीच कोई मिलने वाला या वाली आ जाए तो फिर पूछना ही क्या?

बच्चे पढ़ें या फिर उधम-बाजी करें, खाला पर कोई असर न पड़ता।

उन्हें तो हामी भरने वाला मिल जाए तो आन-तान की हाँकती रहेंगी।

सनूबर इसीलिए बड़बड़ाया करती कि मम्मी के कारण घर में इतना हल्ला-गुल्ला मचा रहता है कि पढ़ाई में दिल नहीं लग पाता। गप्पें हाँकने के क्रम में खाला घर आए लोगों को चाय-नमकीन भी कराया करतीं। जिसके लिए सनूबर को परेशान होना पड़ता।

ऐसे घर में अनुशासन की कल्पना भी व्यर्थ थी।

नौ

यूनुस याद करने लगा अपनी जिंदगी का वह मनहूस दिन, जब जमाल साहब उसके जीवन में आए और एक निश्चित दिशा में चलती उसकी जीवन की गाड़ी पटरी से उतर गई...

उसे अच्छी तरह याद है वो जुमा का दिन था, क्योंकि उस दिन घर में गोश्त-पुलाव पका था। होता ये कि जुमा की नमाज अदा करके घर आने पर सब एक साथ बैठकर खाना खाते। यूनुस नमाज के बाद पढ़े जाने वाले सलातो-सलाम में शामिल न होता। उसमें इतना धैर्य कहाँ होता। वह फजर नमाज पढ़कर मस्जिद से सबसे पहले भागने वालों में शामिल रहता। वैसे भी वह भूख बर्दाश्त नहीं कर सकता था।

गर्मी के कारण उसे गोश्त-पुलाव के साथ प्याज खाने का मन हुआ। इसलिए घर आकर यूनुस ने सबसे पहले सब्जी की टोकरी से एक प्याज उठाया। फिर उसे काटने के लिए छुरी खोजने रसोई में घुसा।

सनूबर स्कूली ड्रेस पहने हुए किचन में उकड़ू बैठकर चपड़-चपड़ गोश्त-पुलाव खा रही थी। यूनुस को देख वह मुस्कराई और अपने प्लेट से गोश्त की एक बोटी उठाकर यूनुस की ओर बढ़ाई। यूनुस ने उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में शरारत और मुहब्बत के मिले-जुले भाव देखे।

यूनुस ने बोटी मुँह के हवाले की।

एकदम रसगुल्ले की तरह मुँह में पिघल गया था गोश्त... वाकई रहमत चिकवा खालू के नाम पर अच्छा गोश्त देता है।

सनूबर ने यूनुस के हाथ में प्याज देखकर उससे प्याज माँग लिया।

खाना खत्म कर प्लेट में ही हाथ धोकर सनूबर एक तश्तरी में प्याज काटने लगी। प्याज के पतले-पतले गोल टुकड़े।

तभी खाला किचन की तरफ आईं।

यूनुस के मुँह को चलता देख उन्होंने पूछा - 'गोश्त कैसा बना है?'

यूनुस ने रहमत चिकवा की बड़ाई करते हुए कहा - 'एक नंबर का माल है खाला! रहमतवा खालू के नाम पर माल ठीक देता है।'

वाकई पैसे भी दो और माल भी ठीक न मिले, कितना तकलीफ होता है। कुकर में गलाते-गलाते मर जाओ। गोश्त भी इतना बदबूदार निकल आए कि घिन हो जाए। आदमी गोश्त खाने से तौबा कर ले।

खाला ने कहा - 'अल्लाह का फजल है कि रहमतवा ठीकै गोश्त देता है।'

अमूमन जुमा और इतवार के दिन रहमत चिकवा की दुकान से तीन पाव गोश्त मँगवाया जाता। यूनुस ही गोश्त लेने जाता। कालोनी के बाहर रेलवे लाइन के उस पास नाले के एक तरफ कसाइयों की दुकानें प्रतिदिन सजतीं।

रेलवे की जमीन पर अवैध रूप से कब्जा करके चिकवा लोगों ने अपने घर और दुकानें बना ली थीं। कहते हैं कि आरपीएफ वाले आकर वसूली कर जाते हैं। रेलवे वालों से मिली भगत है सब।

उस अघोषित मुहल्ले को कसाई टोला कहा जाता।

रहमत चिकवा खालू के गाँव का था, इसलिए अस्सी रुपए किलो का माल उनके घर साठ रुपए के हिसाब से आता।

यूनुस कभी सोचता कि इतने काम सीखे उसने लेकिन कसाई का काम न सीखा। वैसे घर में बकरीद के मौके पर होने वाली कुरबानी में बाहर से कसाई न बुलवाया जाता। अब्बू और सलीम भइया बकरे को जिबह कर खालपोशी कर लेते तो यूनुस बोटियाँ बना लेता था। असली कलाकारी तो खाल को सही-सलामत बकरे के जिस्म से अलग करने में है। उस खाल को स्थानीय मदरसे में भेजा जाता। जिसकी नीलामी होती और प्राप्त पैसे से मदरसे की आमदनी हो जाती।

गोश्त लेने खाला यूनुस को सुबह सात बजे दौड़ा देतीं। कहतीं कि चिकवा ससुरे सुबह ठीक माल दिए तो ठीक वरना बाद में दो-नंबरिया माल मिलता है।

सात बजे रहमत अपनी दुकान सजा नहीं पाता था। इसलिए यूनुस सीधे उसके घर चले जाता।

घर के बाहर ही तो गोश्त की दुकान थी।

रहमत चिकवा की एक बेटी थी। साँवली सी नटखट लड़की। नैन-नक्श तीखे। साँवली रंगत।

यूनुस को देख जाने क्यों वह मुस्कराती।

रहमत की बीवी उसे 'बानू' कह कर पुकारती। वह देहाती जुबान में बातें करती।

उसमें एक ही ऐब था। उसके पीले-मटमैले टेढ़े-मेढ़े दाँत। जब वह हँसती या कुछ बोलती तो उसके दाँत बाहर निकल आते और सारा मजा किरकिरा हो जाता।

वह जब भी रहमत के घर जाता, वहाँ टट्टर की चारदीवारी के अंदर बकरियों की मिमियाहट गूँज रही होती और 'बानू' आँगन में झाड़ू लगाते मिलती।

जब वह झुकती तो कुर्ते के कटाव से उसके उभार छलक आते। यूनुस को यकीन है कि 'बानू' जानबूझ कर उसे यह दर्शन-सुख देना चाहती थी।

फिर रहमत के लिए चाय या पानी लेकर आती तो यूनुस भी उसमें शामिल हो जाता।

चाय के कप या गिलास पकड़ाते समय वह आसानी से अपने हाथों का स्पर्श उसके हाथ से होने देती। कप पकड़े वह उसका चेहरा निहारता। बस, यहीं गड़बड़ हो जाती। आँखें मिलते ही 'बानू' मुस्कराती। उसके होंठ पलट जाते और खपरैल से मटमैले दाँत बाहर निकल आते। खूबसूरती का तिलस्म टूट जाता। यूनुस को ऐसा महसूस होता

जैसे उसने रहमत की दुकान के कोने में पड़े, बकरों के कटे सिर देखे हों, जिनके दाँत इसी तरह बाहर निकले रहते हैं।

रहमत चिकवा खस्सी के नाम पर कैसा भी गोश्त काट कर बेचने के लिए बदनाम है। ऐसी-वैसी बकरी काट कर रहमत बड़ी सफाई से उसके मादा अंगों की गवाही निकाल देता। फिर उस जगह किसी बकरे के नर-अंग बड़ी सफाई से 'फिट' कर देता। फिर चीख-चीख कर ग्राहकों को बुलाता - 'अल्ला कसम भाईजान, खस्सी है खस्सी! एक नंबर का माल!'

मियाँ भाई तो अंदाज लगा लेते कि मामला क्या है, लेकिन चोरी-छिपे मटन खाने वाले हिंदू ग्राहक क्या समझते! वे तो वैसे ही नजर बचाकर मटन खरीदने आते या फिर उनके चेले आते। उन्हें बेवकूफ बनाना तो रहमत के बाएँ हाथ का खेल था। वे आसानी से उसके झाँसे में आ जाते।

खालू से अच्छे संबंधों के कारण रहमत चिकवा उन्हें सही माल देता।

दस

किस्सा कोताह ये कि जुमा की नमाज पढ़कर जब खालू घर आए तो वह अकेले न थे। उनके साथ एक युवक था।

खालू ने उन्हें पहले कमरे में प्लास्टिक की कुर्सी पर बिठाया। फिर पसीना पोंछते हुए अंदर आवाज लगाई - 'पीछे वाला कूलर बंद है का?'

खाला अंदर से बड़बड़ाई - 'बाहर आग बरसन लाग है त मुआ कूलर केतना ठंडक करी?'

वाकई उस बरस गर्मी बहुत पड़ी थी।

फिर खालू ने यूनुस को आवाज देकर घड़े से दो गिलास ठंडा पानी मँगवाया।

यूनुस पानी लेकर आया। देखा कि आगंतुक एक सुदर्शन युवक है। खालू ने उसे इस तरह घूरते देख डाँटा - 'सलाम करो।'

यूनुस ने सलाम किया।

खालू उस व्यक्ति से बतियाने लगे - 'साढ़ू का बेटा है। यहीं 'एमसीए' में पेलोडर चलाता है। आजकल मुसलमानों का हुनर ही तो सहारा है। नौकरी में तो 'मीम' की कटाई तो आप देखते ही हैं।'

यहाँ खालू का 'मीम' से तात्पर्य अरबी के 'मीम' वर्ण से था। मीम माने हिंदी का 'म'। दूसरे शब्दों में मीम माने मुसलमान।

आगंतुक के माथे पर बल पड़ गए - 'गल्त बात है भाईजान, हकीकतन ऐसा नहीं है। मियाँ लोग 'एजूकेशन' पर कहाँ ध्यान देते हैं। अपने पास घर हो न हो, कपड़े-लत्ते हों न हों, बच्चों की किताब-कापी हो न हो लेकिन थोड़ी

कमाई आई नहीं कि नवाब बन जाएँगे। गोश्त-पुलाव उड़ाएँगे। बच्चे धड़ाधड़ पैदा किए जाएँगे। अल्ला मियाँ हैं ही रिज्क देने के लिए।'

उन साहब ने जैसे यूनुस के मन की बात की हो।

यही तो सच है। खाली-पीली अपने हिंदू भाइयों को कोसना कहाँ तक उचित है। इंसान को पहले अपने गिरेबान में झाँकना चाहिए। कहाँ कमी है? ये नहीं कि माइक उठाया और लगे कोसने गैरों को।

तब तक खाला भी कमरे में आ गईं।

खालू ने आगंतुक से खाला का परिचय, जमाल साहब के नाम से कराया। बताया उनके नए साहब हैं। नागपुर के रहने वाले।

खाला ने उन्हें सलाम किया।

खाला वहीं तख्त पर बैठ कर जमाल साहब का जायजा लेने लगीं। वह बत्तीस-तैंतीस साल के जवान थे। साँवली रंगत और चेहरे पर मोटी मूँछ। कुछ-कुछ संजय दत्त की तरह की हेयर स्टइल। जमाल साहब से खाला ने आदतन पूछा-पाछी शुरू की। पता चला कि उनके वालिद वेस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड की किसी खदान में कार्मिक प्रबंधक हैं। जमाल साहब की शादी नहीं हुई है, इसीलिए उन्होंने क्वाटर एलॉट नहीं करवाया था। वह आफीसर्स गेस्ट रूम में रहते हैं।

गर्मी के मारे जैसे जान निकली जा रही हो।

खाला अपने आँचल से पंखे का काम लेने लगीं, जिससे उनके पेट का कुछ हिस्सा और छाती दिखने लगी।

जमाल साहब ने जो समझा हो, लेकिन यूनुस को यह सब बहुत बुरा लगा।

खाला जमाल साहब से बेतकल्लुफ हुईं और उन्हें खाने का न्योता दिया।

फिर क्या था।

वहीं तख्त पर दस्तरख्वान बिछाया गया।

किचन में सनूबर ने जो सलाद के लिए प्याज काटा था, उसे मेहमान के लिए पेश किया जाने लगा। खालू और जमाल साहब ने साथ-साथ खाना खाया।

बीच में एक बार सालन घटा तो सनूबर को आवाज देकर खालू ने बुलाया था।

सनूबर एक कटोरी सालन पहुँचा आई थी।

सनूबर का सालन पहुँचाना यूनुस को अच्छा नहीं लगा।

खाला ने सनूबर का परिचय जमाल साहब से कराया - 'बड़की बिटिया है। नवमी में पढ़ती है।'

सनूबर ने जमाल साहब को सलाम किया तो खाला ने टोका - 'गधी, खाते समय सलाम नहीं करते न!'

सनूबर झेंप कर भाग गई।

ग्यारह

फिर जमाल साहब खाला के घर अक्सर आने लगे।

खालू घर में हों या न हों, खाला उनकी खूब खातिर-तवज्जो करतीं।

जमाल साहब आते तो टीवी खोलकर बैठ जाते। घर में उर्दू का एक अखबार आता था। खालू सनूबर से उनके लिए भजिए-पकौड़ी तलवातीं। जमाल साहब कड़ी पत्ती और कम चीनी वाली चाय बड़े शौक से पीते। घर में अच्छे कप न थे। खाला ने बर्तन वाले की दुकान से बोन-चायना वाला कीमती कप-सेट खरीदा था।

जमाल साहब का प्रमोशन हुआ तो वह मिठाई का डिब्बा लेकर आए।

यूनुस उस दिन घर पर ही था।

रसमलाई की दस कटोरियाँ थीं। बनारसी स्वीट्स की खास मिठाई।

खाला ने तो रसमलाई खाकर ऐलान कर दिया कि अपने इस जीवन में उन्होंने ऐसी उम्दा मिठाई कभी न खाई थी। खालू ठहरे कंजूस। छेना की मिठाई कभी लाते नहीं। फातिहा-दरूद के लिए वही मनोहरा के होटल से खूब मीठे पेड़े ले आते।

कभी कोई आया या किसी के घर गए तो खोवा की मिठाइयाँ या बिस्किट वगैरा से स्वागत होता। रसमलाई जैसी मिठाई उन्होंने कभी न खाई थी।

रसमलाई का रस जो कटोरी में बचा था, वे उसे सुड़कते हुए पीने लगीं।

जमाल साहब हँस दिए।

सनूबर, छोटकी और अन्य बच्चों के साथ यूनुस ने भी पूरा स्वाद लेते हुए रसमलाई खाई।

खाला अपनी देहाती में उतर आईं जिसका लब्बोलुआब था कि वाकई दुनिया में एक से एक लजीज चीजें हैं।

इस तरह जमाल साहब उस परिवार में एक सदस्य की तरह शामिल हो गए।

जब उनका मन गेस्ट-हाउस के खाने से ऊब जाता तो वे बिना संकोच खाला के घर आ जाते। वो चाहे कैसा समय हो, खाला और सनूबर, उनके लिए तत्काल कुछ न कुछ खाने की व्यवस्था अवश्य कर देतीं।

जमाल साहब के सामने कभी-कभी खाला सनूबर को डाँटने लगतीं या गरियाने लगतीं तो सनूबर नाराज हो जाती। इस आवाज में सुबकती कि जमाल साहब तक उसके नाक सुड़कने की आवाज पहुँच जाए।

फिर जमाल साहब खाला को समझाते कि इतनी सुघड़-समझदार बिटिया को इस तरह नहीं डाँटा-मारा करते। सनूबर तो घर-रखनी है। सभी का ख्याल रखती है।

सनूबर उन्हें जमाल अंकल कहती।

यूनुस उन्हें साहब ही कहता।

पूरे घरवालों में जमाल साहब की बढ़ती जा रही लोकप्रियता से उसे चिढ़ होने लगी।

चिढ़ का एक और कारण ये भी था कि जमाल साहब के आ जाने से सनूबर अब यूनुस का खास ख्याल नहीं रख पाती।

यूनुस ठेकेदारी मजदूर ठहरा! उसकी ड्यूटी का टाइम बड़ा अटपटा था। कभी अलस्सुबह जाना पड़ता और कभी रात के बारह बजे बुलौवा आ जाता। कभी रात के बारह-एक बजे घर वापस लौटता। कपड़े मैले-कुचैले हो जाते। कपड़ों में ग्रीस-मोबिल के दाग लगे होते।

पहले आदतन वह कपड़े स्वयं धोता था। फिर सनूबर मेहरबानी करके उसके कपड़े धोने लगी। अब ये यूनुस का अधिकार बन गया कि सनूबर ही उसके कपड़े धोए।

जमाल अंकल के कारण सनूबर को अब किचन में कुछ ज्यादा समय देना पड़ता था। खाला तो सिर्फ हा-हा, ही-ही करती रहतीं। कभी पापड़ तलने को कहेंगी, कभी चाय बनाने का आदेश पारित करेंगी।

खालू आ जाते तो वह भी पूछा करते कि साहब की खिदमत में कोई कसर तो नहीं रह गई है।

यूनुस ने यह भी गौर किया कि खाला जमाल साहब के सामने सनूबर को कुछ ज्यादा ही डाँटती हैं।

इससे जमाल साहब उन्हें ऐसा करने से मना करते हैं। कहते हैं कि बच्चों को प्यार से समझाना चाहिए।

अक्सर इस बात पर सनूबर सुबकने लगती।

जमाल अंकल उसे अपने पास बुलाते और बिठाकर समझाते कि माँ-बाप की बात का बुरा नहीं मानना चाहिए। साथ ही साथ वह खाला को भी समझाते कि बच्चों के साथ अच्छा व्यवहार करें।

फिर वह दिन भी आया कि जमाल साहब ने आफीसर्स गेस्ट हाउस के मेस में खाना बंद कर दिया और खालू के घर में उनका खाना बनने लगा।

जीप आती और सुबह का नाश्ता करके वह खदान चले जाते। दुपहर के खाने का पक्का नहीं रहता। यदि देर हो जाती तो वे वहीं कहीं केंटीन वगैरा में कुछ खा-पी लेते। रात का खाना वह खालू के घर ही खाते। उन्होंने संकोच के साथ कुछ पैसे भी देने चाहे, लेकिन खाला ने मना कर दिया।

इसके बदले वह स्वयं कभी गोश्त और कभी अन्य सामान के लिए जेब से पैसे निकालकर देते।

कुल मिलाकर वह भी घर के स्थायी सदस्य बन चुके थे।

रात के दस-ग्यारह बजे तक वह घर में डटे रहते। कभी टीवी देखते और कभी बच्चों को पढ़ाने लगते। बच्चों के साथ वह हँसी-मजाक बहुत करते, जिससे बच्चों का मन लगा रहता।

अड़ोसियों-पड़ोसियों के सामने खाला-खालू का सीना चौड़ा होता रहता कि एक अधिकारी उनका रिश्तेदार है। खाला जमाल साहब को अपना दूर का रिश्तेदार बतातीं, उधर खालू उन्हें अपना रिश्तेदार सिद्ध करते। वैसे वह उन दोनों के रिश्तेदार किसी भी कोण से हो नहीं सकते थे क्योंकि खाला-खालू तो एमपी के थे और जमाल साहब नागपुर तरफ के रहने वाले।

लोगों को इससे क्या फर्क पड़ता।

आप अपने घर में जिसे बुलाओ, बिठाओ, खिलाओ-पिलाओ या सुलाओ। इससे मुहल्ले वालों की सेहत में क्या फर्क पड़ सकता है। बस, फुर्सत में सभी उस घर में पनप रहे किसी नए रिश्ते की, किसी नई कहानी के पैदा होने की उम्मीद टाँगे बैठे थे।

यूनुस को जमाल साहब का इस तरह घर में छा जाना बर्दाश्त नहीं हो रहा था। वह देख रहा था कि खाला भी जमाल साहब के सामने खूब चहकती रहती हैं। सनूबर के भी हाव-भाव ठीक नहीं रहते हैं। सभी जमाल साहब को लुभाने की तैयारी में संलग्न दिखते हैं।

एक दिन यूनुस ने खाला के मुँह से सुना कि वह जमाल साहब को अपना दामाद बनाना चाह रही हैं।

अरे, ये भी कोई बात हुई। कहाँ जमाल साहब और कहाँ फूल सी लड़की सनूबर। दोनों के उम्र में सोलह-सत्रह बरस का अंतर...

क्या ये कोई मामूली अंतर है?

खाला कहने लगीं - 'जब तेरे खालू से मेरा निकाह हुआ तब मैं बारह साल की थी और तेरे खालू तीस बरस के जवान थे। क्या हम लोग में निभ नहीं रही है?'

यूनुस क्या जवाब देता।

सनूबर ने भी तो उस मंसूबे का विरोध नहीं किया था। कहीं उसके मन में भी तो अफसराइन बनने की आकांक्षा नहीं?

यूनुस के पास खानाबदोशी जीवन और असुविधाओं-अभावों का अंबार है जबकि जमाल साहब का साथ माने पाँचों उँगलियाँ घी में होना।

बारह

तभी दूसरी घंटी बजी।

टननननन टन्न टनन...

सिंगरौली के एक स्टेशन पहले से गाड़ी छूटने का सिग्नल। यानी अगले पंद्रह मिनट बाद गाड़ी प्लेटफार्म पर आ जाएगी। यात्रीगण मुस्तैद हुए।

यूनुस के अंदर घर बना चुका डर अभी खत्म न हुआ था। खालू कभी भी आ सकते हैं। उनके सहकर्मी पांडे अंकल इन सब मामलात में बहुत तेज हैं। खालू कहीं उनकी बुल्लेट में बैठ धकधकाते आ न रहे हों। एक बार गाड़ी पकड़ा जाए, उसके बाद 'फिर हम कहाँ तुम कहाँ!'

प्लेटफार्म पर वह ऐसी जगह खड़ा था, जहाँ ठंड से बचने के लिए रेलवे कर्मचारियों ने कोयला जला रखा था। इस जगह से मुख्य द्वार पर आसानी से नजर रखी जा सकती थी। उसने सोच रखा था यदि खालू दिखाई दिए तो वह अँधेरे का लाभ उठाकर प्लेटफार्म के उस पार खड़ी माल गाड़ी के पीछे छिप जाएगा। इस बीच यदि पैसेंजर आई तो चुपचाप चढ़कर संडास में छिप जाएगा। फिर कहाँ खोज पाएँगे खालू उसे।

उसे मालूम नहीं कि अब वह घर लौट भी पाएगा या अपने बड़े भाई सलीम की तरह इस संसार रूपी महासागर में कहीं खो जाएगा।

यूनुस को सलीम की याद हो आई...

उसे यही लगता कि सलीम मरा नहीं बल्कि हमेशा की तरह घर से रूठ कर परदेस गया है। किसी रोज ढेर सारा उपहार लिए हँसता-मुस्कराता सलीम घर जरूर लौट आएगा।

सलीम, यूनुस की तरह एक रोज घर से भाग कर किसी 'परदेस' चला गया था। 'परदेस' जहाँ नौजवानों की बड़ी खपत है। 'परदेस' जहाँ सपनों को साकार बनाने के ख्वाब देखे जाते हैं। वह 'परदेस' चाहे दिल्ली हो या मुंबई, कलकत्ता हो या अहमदाबाद। उच्च-शिक्षा प्राप्त लोगों का 'परदेस' वाकई परदेस होता है, वह यूएसए, यूके, गल्फ आदि नामों से पुकारा जाता है।

यूनुस अपने गृह-नगर की याद कब का बिसार चुका है। उस जगह में याद रहने लायक कशिश ही कहाँ थी? मध्य प्रदेश के पिछड़े इलाके का एक गुमनाम नगर कोतमा...

आसपास के कोयला खदानों के कारण यहाँ की व्यापारिक गतिविधियाँ ठीक-ठाक चलती हैं।

नगर-क्षेत्र में बाहरी लोग आ बसे और नगर की सीमा के बाहर मूल शहडोलिया सब विस्थापित होते गए। यहाँ रेल और सड़क यातायात की सुविधा है। एक-दो पैसेंजर गाड़ियाँ आती हैं। पास में अनूपपुर स्टेशन है, जहाँ से कटनी या फिर बिलासपुर के लिए गाड़ियाँ मिलती हैं।

कोतमा इस रूट का बड़ा स्टेशन है। लोग कहते हैं कि सफर के दौरान कोतमा आता है तो यात्रियों को स्वयमेव पता चल जाता है। कोतमा-वासी अपने अधिकारों के लिए लड़-मरने वाले और कर्तव्यों के प्रति लापरवाह किस्म के हैं। हल्ला-गुल्ला, अनावश्यक लड़ाई-झगड़े की आवाज से यात्रियों को अंदाज हो जाता है कि महाशय, कोतमा आ गया। रेल में पहले से जगह पा चुकी सवारियाँ सजग हो जाती हैं कि कहीं दादा किस्म के लोग उन्हें उठा न फेंकें।

कोतमा में हिंदू-मुसलमान सभी लोग रहते हैं किंतु नगर के एक कोने में एक उपनगर है लहसुई। जिसे कोतमा के बहुसंख्यक 'मिनी पाकिस्तान' कहते हैं। जिसके बारे में कई धारणाएँ बहुसंख्यकों के दिलो-दिमाग में पुख्ता हैं। जैसे लहसुई के बाशिंदे अमूमन जरायमपेशा लोग हैं। ये लोग स्वभावतः अपराधी प्रवृत्ति के हैं। इनके पास देसी कट्टे-तमंचे, बरछी-भाले और कई तरह के असलहे रहते हैं। लहसुई मे खुले आम गौ-वध होता है। लहसुई के निवासी बड़े उपद्रवी होते हैं। इनसे कोई ताकत पंगा लहीं ले सकती। ये बड़े संगठित हैं। पुलिस भी इनसे घबराती है।

लहसुई और कोतमा के बीच की जगह पर स्थित है यादव जी का मकान। उसी में किराएदार था यूनुस का परिवार।

इमली गोलाई के नाम से जाना जाता है वह क्षेत्र।

यादव जी कोयला खदान में सिक्यूरिटी इंस्पेक्टर थे। वे बांदा के रहने वाले थे। घर के इकलौते चिराग। शायद इसीलिए नाम उनका रखा गया था कुलदीप सिंह यादव।

सो गाँव में धर्म-पत्नी खेत और घर की देखभाल किया करतीं। यादव जी इसी कारण परदेस में अकेले ही जिंदगी बसर करने लगे। शुरू में थोड़े अंतराल के बाद छुट्टियाँ लेकर घर जाया करते थे। फिर कोयला खदान क्षेत्र में आसानी से मुँह मारने का जुगाड़ पाकर उनके देस जाने की आवृत्ति कम होती गई।

कुलदीप सिंह यादव जी स्वभाव से चंचल प्रकृति के थे। देस में 'बावन बीघा पुदीना' उगाने वाले यादव जी का, इधर-उधर मुँह मारते-मारते, एक युवा विधवा के साथ ऐसा टाँका भिड़ा कि उनकी भटकती हुई कश्ती को किनारा मिल गया।

वह विधवा पनिका जाति की स्त्री थी। उसने भी कई घाट का पानी पिया था। लगता था कि जैसे वह भी अब थक गई हो। दोनों ने वफादारी की और आजन्म साथ निभाने की कसमें खाईं।

पनिकाइन, यादव जी के नाम से खूब गाढ़ा सिंदूर अपनी माँग में भरने लगी।

यादव जी भी छिनरई छोड़कर उस पनिकाइन के पल्लू से बँध गए।

धीरे-धीरे उनका छटे-छमाहे देस जाना बंद हुआ और फिर देस में भेजे जाने वाले मनी-आर्डर की राशि में भी कटौती होने लगी।

यादव जी के प्रतिद्वंदियों ने यादव जी की अपने परिजनों से विरक्ति की खबर देस में यादवाइन तक पहुँचाई।

यादवाइन बड़ी सीधी-सादी ग्रामीण महिला थी। उसने घर में मेहनत करके बाल-बच्चों को पाला-पोसा था। गाँव-गिराँव के गाय-गोबर, कीचड़-कांदों और बिन बिजली बत्ती की असुविधाओं को झेला था। यादव जी की बेवफाई उसे कहाँ बर्दाश्त होती। उसने अपने जवान होते बच्चों के दिलों में पिता के खिलाफ नफरत के बीज बोए।

बच्चे युवा हुए तो उन्हें नाकारा बाप को सबक सिखाने कोतमा भेजा।

बच्चे कोतमा आए और उन्होंने अपने बाप को नई माँ के सामने ही खूब मारा-पीटा।

जब यादव जी लड़कों से दम भर पिट चुके तब कोयला-खदान में बसे उनके जिला-जवारियों ने आकर बीच-बचाव किया।

इस घटना से यादव जी की खूब थू-थू हुई।

मजदूर यूनियन के नेतागण, खदान के कर्मचारीगण और यादव जी के बच्चों के बीच पंचइती हुई। यादव जी की वैध पत्नी के त्याग और धैर्य की तारीफें हुईं। यादव जी के चंचल चरित्र और नई पत्नी की वैधता पर खूब टीका-टिप्पणी हुई। फिर सर्वसम्मति से निर्णय हुआ कि बैंक में यादव जी के खाते से प्रत्येक महीने तीन हजार रुपया बांदा में उनकी पत्नी के खाते में स्थानांतरित होगा।

यदि यादव जी इससे इनकार करेंगे तो फिर अंजाम के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। लड़के जवान हो ही गए हैं।

पनिकाइन छनछनाती रह गई। यादव जी ने इन नई परिस्थितियों से समझौता कर लिया। यादव जी सोच रहे थे कि ये बला कैसे भी टले, टले तो सही।

बैंक मैनेजर ने व्यवस्था बना दी। तनख्वाह जमा होते ही तीन हजार रुपए कोतमा से निकलकर बांदा में उनकी पत्नी के खाते में जमा होने लगे। इस तरह सारे भावनात्मक संबंध खत्म करके बच्चे गाँव वापस चले गए।

यादव जी बाल काले न कराएँ तो एकदम बूढ़े दिखें। दाँत टूट जाने के कारण गाल पिचक गए हैं और चेहरा चुहाड़ सा नजर आता है। बनियाइन-चड्ढी में मकान के बाहर बने खटाल में गाय-भैंस को घास-भूसा खिलाते रहते हैं। पानी मिले दूध के व्यापार की देखभाल स्वयं करते हैं।

पनिकाइन की जवानी अभी ढल रही है। कहते हैं कि स्त्री अपनी अधेड़ावस्था में ज्यादा मादक होती है। यह फार्मूला पनिकाइन पर फिट बैठता है। पाँच फुट ऊँची पनिकाइन। जबरदस्त डील-डौल। भरा-भरा बदन। दूध-घी सहित निश्चिंत जीवन पाकर पनिकाइन कितना चिकना गई है। कहते हैं कि यादव जी को एकदम 'चूसै डार' रही है ये नार!

यूनुस जब बच्चा था तब उसने उन दोनों को खटाल में बिछी खाट पर विवस्त्र गुत्थम-गुत्था देखा था।

ये था यूनुस के फुटपाथी विश्वविद्यालय में कामशास्त्र का व्यवहारिक पाठ्यक्रम...

तेरह

कोतमा और उस जैसे नगर-कस्बों में यह प्रथा जाने कब से चली आ रही है कि जैसे ही किसी लड़के के पर उगे नहीं कि वह नगर के गली-कूचों को 'टा-टा' कहके 'परदेस' उड़ जाता है।

कहते हैं कि 'परदेस' मे सैकड़ों ऐसे ठिकाने हैं जहाँ नौजवानों की बेहद जरूरत है। जहाँ हिंदुस्तान के सभी प्रांत के युवक काम की तलाश में आते हैं।

ठीक उसी तरह, जिस तरह महानगरों के युवक अच्छे भविष्य की तलाश में विदेश जाने को लालायित रहते हैं।

सुरसा के मुख से हैं ये औद्योगिक मकड़जाल।

बेहतर जिंदगी की खोज में भटकते जाने कितने युवकों को निगलने के बाद भी सुरसा का पेट नहीं भरता। कभी उसका जी नहीं अघाता। उसकी डकार कभी किसी को सुनाई नहीं देती। तभी तो हिंदुस्तान के सुदूर इलाकों से अनगिनत युवक अपनी फूटी किस्मत जगाने महानगरों की ओर भागे चले आते हैं।

अपनी जन्मभूमि, गाँव-घर, माँ-बाप, भाई-बहन, संगी-साथी और कमसिन प्रेमिकाओं को छोड़कर।

उन युवकों को दिखलाई देता है पैसा, खूब सारा पैसा। इतना पैसा कि जब वे अपने गाँव लौटें तो उनके ठाट देखकर गाँव वाले हक्के-बक्के रह जाएँ।

आलोचक लोग दाँतों तले उँगलियाँ दबाकर कहें कि बिटवा, निकम्मा-आवारा नहीं बल्कि कितना हुशियार निकला!

लेकिन क्या उनके ख्वाब पूरे हो पाते हैं।

हकीकतन उनके तमाम मंसूबे धरे के धरे रह जाते हैं।

रुपया कमाना कितना कठिन होता है, उन्हें जब पता चलता तब तक वे शहर के पेट की आग बुझाने वाली भट्टी के लिए ईंधन बन चुके होते हैं। शुरू में उन्हें शहर से मुहब्बत होती है। फिर उन्हें पता चलता है कि उनकी जवानी का मधुर रस चूसने वाली धनाढ्य बुढ़िया की तरह है ये शहर। जो हर दिन नए-नए तरीके से सज-सँवरकर उन पर डोरे डालती है। उन्हें करारे-करारे नोट दिखाकर अपनी तरफ बुलाती है। सदियों के अभाव और असुविधाओं से त्रस्त ये युवक उस बुढ़िया के इशारे पर नाचते चले जाते हैं।

बुढ़िया के रंग-रोगन वाले जिस्म से उन्हें घृणा हो उठती है, लेकिन उससे नफरत का इजहार कितना आत्मघाती होगा उन्हें इसका अंदाज रहता है।

उन्हें पता है कि देश में भूखे-बेरोजगार युवकों की कमी नहीं। बुढ़िया तत्काल दूसरे नौजवान तलाश लेगी।

शहर में रहते-रहते वे युवक गाँव में प्रतीक्षारत अपनी प्रियतमा को कब बिसर जाते हैं, उन्हें पता ही नहीं चल पाता है। उनकी संवेदनाएँ शहर की आग में जल कर स्वाहा हो जाती हैं। वे जेब में एक डायरी रखते हैं जिसमें मतलब भर के कई पते, टेलीफोन नंबर वगैरा दर्ज रहते हैं, सिर्फ उसे एक पते को छोड़कर, जहाँ उनका जन्म हुआ था। जिस जगह की मिट्टी और पानी से उनके जिस्म को आकार मिला था। जहाँ उनका बचपन बीता था। जहाँ उनके वृद्ध माता-पिता हैं, जहाँ खट्टे-मीठे प्रेम का 'ढाई आखर' वाला पाठ पढ़ा गया था। जहाँ की यादें उनके जीवन का सरमाया बन सकती थीं।

हाँ, वे इतना जरूर महसूस करते कि अब इस शहर के अलावा उनका कोई ठिकाना नहीं।

पता नहीं, शहर उन्हें पकड़ लेता है या कि वे शहर को जकड़ लेते हैं।

एक भ्रम उन्हें सारी जिंदगी शहर में जीने का आसरा दिए रहता है कि यही है वह मंजिल, जहाँ उनकी पुरानी पहचान गुम हो सकती है।

यही है वह संसार जहाँ उनकी नई पहचान बन पाई है।

यही है वह जगह, जहाँ उन्हें 'फलनवा के बेटा' या कि 'अरे-अबे-तबे' आदि संबोधनों से पुकारा नहीं जाएगा। जहाँ उनका एक नाम होगा जैसे - सलीम, श्याम, मोहन, सोहन...

यही है वह दुनिया, जहाँ चमड़ी की रंगत पर कोई ध्यान नहीं देगा। आप गोरे हों या काले, लंबे हों या नाटे। महानगरीय-सभ्यता में इसका कोई महत्व नहीं है।

यही है वह स्थल, जहाँ वे होटल में, बस-रेल में, नाई की दुकान की दुकान में, सभी के बराबर की हैसियत से बैठ-उठ सकेगे।

यहीं है वह मंजिल, जहाँ उनकी जात-बिरादरी और सामाजिक हैसियत पर कोई टिप्पणी नहीं होगी, जहाँ उनके सोने-जागने, खाने-पीने और इठलाने का हिसाब-किताब रखने में कोई दिलचस्पी न लेगा। जहाँ वे एकदम स्वतंत्र होंगे। अपने दिन और रात के पूरे-पूरे मालिक।

लेकिन क्या यह एक भ्रम की स्थिति है? क्या वाकई ऐसा होता है?

फिर भी यदि यह एक भ्रम है तो भी 'दिल के बहलाने को गालिब ये खयाल अच्छा है।'। इसी भ्रम के सहारे वे अनजान शहरों में जिंदगी गुजारते हैं। आजीवन अपनी छोटी-छोटी, तुच्छ इच्छाओं की पूर्ति के लिए संघर्षरत रहते हैं।

कितने मामूली होते हैं ख्वाब उनके!

एक-डेढ़ घंटे की लोकल बस या रेल-यात्रा दूरी पर मिले अस्थायी काम। एक छोटी सी खोली। करिश्मा कपूर सा भ्रम देती पत्नी। अंग्रेजी स्कूल में पढ़ते बच्चे। टीवी, फ्रिज, कूलर। छोटा सा बैंक बैलेंस कि हारी-बीमारी में किसी के आगे हाथ न पसारना पड़े।

विडंबना देखिए कि उन्हें पता भी नहीं चलता और एक दिन यथार्थ वाली दुनिया बिखर जाती । उस स्वप्न-नगरी के वे एक कलपुर्जे बन जाते।

गाँव-गिराँव से उन्हें खोजती-भटकती खबरें आकर दस्तक देतीं कि बच्चों के लौट आने की आस लिए मर गए बूढ़े माँ-बाप।

खबरें बतातीं कि छोटे भाई लोग जमींदार की बेकारी खटते हैं और फिर साँझ ढले गाँजा-शराब में खुद को गर्क कर लेते हैं।

खबरें बतातीं कि उनकी जवान बहनें अपनी तन-मन की जरूरतें पूरी न होने के कारण सामंतों की हवस का सामान बन चुकी हैं।

खबरें बतातीं कि उनकी मासूम महबूबाओं की इंतजार में डूबी रातों का अमावस कभी खत्म नहीं हुआ।

इस तरह एक दिन उनका सब-कुछ बिखर जाता।

ये बिखरना क्या किसी नव-निर्माण का संकेत तो नहीं?

चौदह

खाला का दबाव था, सो खालू को 'एक्शन' में आना ही था।

खालू उसे 'मदीना टेलर' के मालिक बन्ने उस्ताद के पास ले आए।

मस्जिद पारा में स्थित यतीमखाना के सामने अंजुमन कमेटी की तरफ से तीन दुकानें बनाई गई हैं। इन दुकानों से यतीमखाना के प्रबंध के लिए आय हो जाती है। ये सभी दुकानें मुसलमान व्यापारियों को ही दी जातीं। एक दुकान में आटा चक्की थी, दूसरे में किराने का सामान और तीसरी दुकान के माथे पर टँगा बोर्ड - मदीना टेलर, सूट-स्पेशलिस्ट

मदीना टेलर के मालिक थे बन्ने उस्ताद। बन्ने उस्ताद एक पारंपरिक दर्जी थे। कहते हैं शुरू में वे लेडीज टेलर के नाम से जाने जाते थे। पैसे कमाकर स्वयं कारीगर रखने लगे, और तब अचानक नाम वाले बन गए। आजकल शादी-ब्याह के अवसर पर मध्यमवर्गीय परिवार दूल्हे के लिए कोट-पैंट जरूर बनवाते हैं। शादी मे जो एक बार थ्री-पीस सूट लड़का पहन लेता है, फिर अपनी जिंदगी में अपने खर्चे से वह कहाँ एक भी सूट सिलवा पाता है। यदि किस्मत से बेटे का बाप बना तो फिर भावी समधी के बजट पर बेटे की शादी में कोट सिलवा सके तो उसका भाग्य! बन्ने उस्ताद शहर से अच्छे कारीगर उठा लाए थे, जिसके कारण उनकी दुकान ठीक चला करती।

उनकी वेशभूषा बड़ी हास्यास्पद रहती। अलीगढ़ी पाजामे पर कढ़ाई वाला बादामी कुर्ता। आँखें इस तरह मिचमिचाते ज्यों बहुत तेज धूप में कहीं दूर की चीज को गौर से देख रहे हों। हँसते-बोलते तो ऊबड़-खाबड़ मैले दाँतों के कारण चेहरा चिंपैंजी सा दिखाई देता।

यूनुस, बन्ने उस्ताद का हुलिया देख बमुश्किल-तमाम अपनी हँसी रोक सका।

खालू के सामने उन्होंने यूनुस को बड़े प्यार से अपने पास बुलाया। यूनुस ने उन्हें सलाम किया तो बन्ने उस्ताद ने मुसाफा के लिए हाथ बढ़ाया।

यूनुस का हाथ अपने हाथों में लेकर बड़ी देर तक नसीहतों की बौछार करते रहे।

'दर्जीगिरी आसान पेशा नहीं बरखुरदार! टेढ़े-मेढ़े कपड़े सिलकर आज कोई भी दर्जी बन जाता है, हैना...! बड़ा मुश्किल हुनर है टेलरिंग, समझे। शहर के तमाम नामवर टेलर मेरे शागिर्द रहे हैं। 'पोशाक-टेलर्स' वाला मुनव्वर अंसारी हो या 'माडर्न-टेलर' वाले कासिम मियाँ, सभी इस नाचीज की मार-डाँट खाकर आज शान से कमा-खा रहे हैं, हैना...'

खालू उनकी बात के समर्थन में सिर हिला रहे थे।

यूनुस का हाथ उस्ताद ने छोड़ा नहीं था, कभी उनकी पकड़ हल्की पड़ती कभी सख्त। यूनुस चाहता उसके हाथ पकड़ से आजाद हो जाएँ, लेकिन उसने महसूस किया कि उसकी जद्दोजहद को बन्ने उस्ताद भाँप रहे हैं।

वे बड़ी व्यग्रता से अपना यशोगान कर रहे थे और यूनुस की हथेली पसीने से भींग गई। उसने खालू को देखा जो निर्विकार बैठे थे।

अचानक बन्ने उस्ताद ने उसे अपने समीप खींचा। यूनुस ने सोचा कि कहीं ये गोद में बिठाना तो नहीं चाहते।

उसके जिस्म ने विरोध किया।

उसके बदन की ऐंठन को उस्ताद ने महसूस किया और हाथ छोड़ यूनुस की पीठ सहलाने लगे - 'देखो बरखुरदार, हाँ क्या नाम बताया तुमने अपना... हाँ यूनुस। यहाँ कई लड़के काम सीख रहे हैं, हैना... उनसे गप्पबाजी मत करना। जैसा काम मिले, काम करना। सिलाई मशीन चलाने की हड़बड़ी मत दिखाना। सीनियरों की बातें मानना। मुझे शिकायत मिली तो समझो छुट्टी हैना...। यदि लगन रहेगी तो एक दिन तुम भी नायाब टेलर बन जाओगे, हैना...'

बन्ने उस्ताद की नसीहतें उसकी समझ में न आईं।

हाँ, उनके मुँह से निकलती पायरिया की बदबू से उसका दम जरूर घुटने लगा था।

यूनुस ने उस्ताद के हाथों को अपने जिस्म की बोटियों का हिसाब लगाते पाया। उसने देखा कि दुकान के कारीगर और लड़के मंद-मंद मुस्करा रहे हैं।

लिहाजा उसने 'मदीना टेलर' जाना शुरू कर दिया।

वह सुबह खाला के घर नाश्ता करके निकलता था। दुपहर दो से तीन बजे तक खाना खाने की मुहलत मिलती और रात आठ बजे लड़कों को छुट्टी मिलती। कारीगर ठेका के मुताबिक काफी रात तक काम में व्यस्त रहते। तीज-त्योहार या शादी-ब्याह के अवसर पर तो सारी रात मशीनें चलती रहतीं।

यूनुस का मन दुकान में रमने लगा था। धीरे-धीरे सहकर्मी लड़कों से उसे बन्ने उस्ताद के बारे में कई गोपनीय सूचनाएँ मिलने लगीं।

दुकान में चार सिलाई मशीनें और एक पीको-कढ़ाई की मशीन थी। सामने एक तरफ बन्ने उस्ताद का काउंटर था। मशीनों के पीछे फर्श पर दरी बिछी हुई थी, जिस पर शागिर्दों का अड्डा होता। यहाँ काज-बटन, तुरपाई और तैयार कपड़े पर प्रेस करने का काम होता।

तीनों शागिर्दों से यूनुस का परिचय हुआ। ये सभी बारह-तेरह बरस के कमसिन बच्चे थे।

नाटे कद का बब्बू गठीले बदन का था और यतीमखाने में हाफिज बनने आया था। यतीमखाने की जेल और कठोर अनुशासन से तंग आकर वह बन्ने उस्ताद के यहाँ टिक गया।

दूसरे का नाम जब्बार था जो पास के गाँव की विधवा का बेटा था।

तीसरा बड़ा हीरो किस्म का लड़का था। बिहार के छपरा जिले का रहने वाला। भुखमरी से तंग आकर अपने मामू के घर आया तो फिर यहीं रह गया। गोरा-चिकना खूबसूरत शमीम। बन्ने उस्ताद का मुँहलगा शागिर्द।

शमीम के पीठ पीछे जब्बार और बब्बू उसे 'बन्ने उस्ताद का लौंडा' नाम से याद करते और अश्लील इशारा करके खूब हँसते।

बब्बू से यूनुस की खूब पटती।

उसने यूनुस को अपनी रामकहानी कई खंडों में बताई थी। उनके बीच में खूब निभती। बन्ने उस्ताद उन्हें सिर जोड़े देखते तो काउंटर से चिल्लाते - 'ए लौंडो! गप मारने आते हो का इहाँ?'

बब्बू झारखंड का रहने वाला था। उसके अब्बा बचपन में मर गए थे। वह पेशे से धुनिया थे। नगर-नगर फेरी लगाकर रजाई-गद्दे बनाया करते। उनका कोई पक्का पड़ाव न था। खानाबदोशों सी जिंदगी थी।

अब्बा के इंतकाल के दो साल बाद उसकी अम्मी ने दूसरी शादी कर ली। सौतेला बाप बब्बू और उसकी बहिन से नफरत करता। बहिन तो छोटी थी। उसे नफरत-मुहब्बत में भेद क्या पता? हाँ, बब्बू घृणा से भरपूर आँखों का मतलब समझने लगा था। अल्ला मियाँ से यही दुआ माँगा करता कि उसे इस दोजख से जल्द निजात मिल जाए।

तभी गाँव आए मौलवी साहब ने उससे मध्यप्रदेश चलने को कहा। बताया कि वहाँ मुसलमानों की अच्छी आबादी है। एक यतीमखाना भी अभी-अभी खुला है। बच्चे वहाँ कम हैं। यतीमखाने में खाने-रहने की समस्या का समाधान हो जाएगा, साथ ही दीनी तालीम भी वह हासिल कर लेगा।

कहते हैं कि खानदान में यदि कोई एक व्यक्ति कुरआन मजीद को हिफ्ज (कंठस्थ) कर ले तो उसकी सात पुश्तों को जन्नत में जगह मिलती है। इससे दुनिया सध जाएगी और आखिरत (परलोक) भी सँवर जाएगी। बब्बू की अम्मा मौलवी साहब की बातों से प्रभावित हुईं और इस तरह बब्बू उनके साथ यहाँ आ गया।

मस्जिद की छत पर बड़े-बड़े तीन हाल थे।

एक हाल में मौलवी साहब रहा करते। दूसरे हाल में मदरसा चलाया जाता। तीसरा हाल यतीम बच्चों के लिए था।

नहाने-धोने के लिए मस्जिद के बाहर एक कुआँ था, जिसमें तकरीबन दस फुट नीचे पानी मिलता था। यह बारहमासा कुआँ था जो कभी न सूखता। संभवतः समीप के नाले के कारण ऐसा हो।

पेशाब और वजू के लिए तो मस्जिद ही में व्यवस्था थी, किंतु पाखाने जाने के लिए डब्बा लेकर मस्जिद के उत्तर तरफ लिप्टस के जंगल की तरफ जाना पड़ता था। शुरू के कुछ दिन बब्बू का मन वहाँ खूब लगा, किंतु वह गाँव के उस आजाद परिंदे की तरह था जिसे पिंजरे में कैद रहना नापसंद हो।

वहाँ की यांत्रिक दिनचर्या से उसका मन उचट गया।

फजिर की अजान सुबह पाँच बजे होती। अजान देने से पहले मुअज्जिन चीखते हुए किसी जिन्नात की तरह आ धमकता - 'शैतान के बहकावे में मत आओ लड़कों। जाग जाओ।'

सुबह के समय ही तो बेजोड़ नींद आती है। ऐसी नींद में विघ्न डालना शैतान का काम होना चाहिए। मुअज्जिन खामखा शैतान को बदनाम किया करता। उन मासूम बच्चों की नींद के लिए शैतान तो वह स्वयं बन कर आता।

मुअज्जिन मरदूद आकर जिस्म से चादरें खींचता, और बेदर्दी से उन्हें उठाता। बड़े हाफिज्जी के डर से लड़के विरोध भी न कर पाते। जानते थे कि यदि मुअज्जिन ने बड़े हाफिज्जी से शिकायत कर दी तो गजब हो जाएगा।

किसी तरह मन मारकर लड़के उठते।

आँखें मिचमिचाते कोने में पर्दा की गई जगह पर जाकर ढेर सारा मूतते।

हुक्म था कि नींद में यदि कपड़े या जिस्म नापाक हो गया हो तो नहाना फर्ज है। नापाक बदन से नमाज अदा करने पर अल्लाह तआला गुनाह कभी माफ नहीं करते। ये गुनाह-कबीरा है। उसने किसी लड़के को सुबह उठने के साथ नहाते नहीं देखा था। हाँ, मुअज्जिन या हाफिज्जी जरूर किसी-किसी सुबह नहाया करते थे। इसका मतलब वे रात-बिरात नापाक हुआ करते थे।

उसे तो वजू करना भी अखरता था। कई बार उसने कायदे से आँख-मुँह धोए बगैर नमाज अदा की थी। बाद में दुआ करते वक्त वह अल्लाह तआला से अपनी इस गलती के लिए माफी माँग लिया करता था।

एक सुबह उसने पाया कि उसका पाजामा सामने की तरह गीला-चिपचिपा है। उसने अपने साथी महमूद को यह बात बतलाई थी। फिर उसी हालत में बिना नहाए उसने नमाज अदा की थी।

महमूद मुअज्जिन का चमचा था।

उसने मुअज्जिन को सारी बात बताई और मुअज्जिन ने उसकी पेशी हाफिज्जी के सामने कर दी।

हाफिज्जी ने उसके बदन पर छड़ी से खूब धुलाई की।

वह खूब रोया।

उसने यतीमखाना से भाग जाने की योजना बनाई।

बन्ने उस्ताद की दुकान में लड़कों को काम करते देख वह 'मदीना टेलर' गया। बन्ने उस्ताद ने उसे काम पर रख लिया। मौलवी साहब और हाफिज्जी ने बारहा चाहा कि बब्बू यतीमखाना लौट आए, किंतु बब्बू ने उस मस्जिद में जाना क्या जुमा की नमाज पढ़ना भी बंद कर दिया। वह जुमा पढ़ने एक मील दूर की मस्जिद में जाया करता था।

वहाँ चार कारीगर थे। उनमें से तीन पतले-दुबले युवक थे, जो चौखाने की लुंगी और बनियाइन पहने सिर झुकाए मशीन से जूझते रहते। घंटे-डेढ़ घंटे बाद कोई एक बीड़ी पीने दुकान से बाहर निकलता। बाकी दो उसके लौटने का इंतजार करते। वे एक साथ दुकान खाली न करते। दुकान में काम की अधिकता रहती।

चौथा कारीगर सुल्तान भाई थे। इन्हें बन्ने उस्ताद फूटी आँख न सुहाते, लेकिन सुल्तान भाई बड़ी 'गुरू' चीज थे।

बन्ने उस्ताद की अनुपस्थिति में सुल्तान भाई के हाथों दुकान की कमान रहती।

जब बन्ने भाई दुकान में मौजूद रहते तब अक्सर सुल्तान भाई के लिए उस्तानी का घर से बुलावा आता। कभी बन्ने भाई स्वयं सुल्तान भाई को यह कह कर रवाना किया करते कि मियाँ घर चले जाओ, बेगम ने आपको याद किया है। हैना...

सुल्तान भाई तीस-पैंतीस के छरहरे युवक थे। हमेशा टीप-टाप रहा करते।

धीरे-धीरे यूनुस ने जाना कि सुल्तान भाई का बन्ने उस्ताद की बीवी के साथ चक्कर चलता है। बन्ने उस्ताद अपने चिकने शागिर्द छपरइहा लौंडे शमीम के इश्क में गिरफ्तार हैं और जागीर लुटाने को तैयार रहते हैं।

'मदीना टेलर' में तीन माह गुजारे थे उसने। इस अवधि मे उससे काज-बटन, तैयार कपड़ों में प्रेस और तुरपाई के अलावा कोई काम न लिया गया। काज-बटन लगाते और तुरपाई करते उसकी उँगलियाँ छिद गईं। सुई के बारीक छेद में धागा डालते-डालते आँखें दुखने लगीं, लेकिन उस्ताद उसे कैंची और इंची टेप पकड़ने न देते।

कारीगर सत्तर-अस्सी की रफ्तार में सिलाई मशीन दौड़ाते। जाने कितने मील सिलाई का रिकार्ड वे बना चुके होंगे। यूनुस का मन करता कि उसे भी 'एक्को बार' सिलाई मशीन चलाने का मौका मिल जाता।

ऐसा ही दुख उसे तब भी हुआ था जब तकरीबन साल भर दिल लगाकर फील्डिंग करवाने के बाद भी उन नामुराद लड़कों ने उसे बल्लेबाजी का अवसर प्रदान नहीं किया था।

हुआ ये कि मुहल्ले में मुगदर के बल्ले और कपड़े की गेंद से क्रिकेट खेलते-खेलते उसके मन में आया कि वह भी असली क्रिकेट क्यों नहीं खेल सकता है?

वह नगर के अमीर लड़कों की जी-हुजूरी करते-करते उनके साथ क्रिकेट खेलने जाने लगा था।

डाक्टर चतुर्वेदी का लड़का बंटी और दवा दुकान वाले गोयल का लड़का सुमीत क्रिकेट टीम के सर्वेसर्वा थे। बाहर से उन लोगों ने क्रिकेट का काफी सामान मँगवाया था। मैदान के पीछे चपरासी का घर था, जहाँ वे लोग खेल का सामान रखते थे। उन लोगों के पास असली बेट, बॉल, स्टंप्स, ग्लब्स, हेलमेट और लेग गार्ड आदि सामान थे।

जब उसने साल भर के निष्ठापूर्ण खेल सहयोग के एवज में बल्लेबाजी का अवसर पाने की बात कही तो वे सभी हँस पड़े।

बंटी ने कहा कि यदि वह वाकई क्रिकेट के लिए सीरियस है तो उसे एक सौ रुपए महीने की मेंबरशिप देनी होगी।

'झोरी में झाँट नहीं सराए में डेरा' - यही तो कहा था सुमीत ने।

मन मसोस कर रह गया था यूनुस।

वहाँ बल्लेबाजी करने को न मिली और यहाँ बन्ने उस्ताद के सख्त आदेश के कारण सिलाई मशीन पर हाथ साफ करने का मौका न मिल पा रहा था।

घर में हाथ से चलने वाली सिलाई मशीन है। अम्मा को सिलाई आती नहीं थी। अब्बू ही कभी सिलाई करने बैठते तो यूनुस या बेबिया से हैंडल घुमाने को कहते। उस मशीन में सिलाई बहुत धीमी गति से होती। पैर से चलने वाली मशीन यूँ फर्र...फर्र... चलती कि क्या कहने!

बन्ने उस्ताद कभी मूड में होते तो बताते कि बड़े शहरों में आजकल बिजली के मोटर से 'एटोमेटिक' मशीनें चलती हैं। ऐसी-ऐसी दुकानें हैं जहाँ सैकड़ों मशीनें घुरघुराती रहती हैं।

यहाँ जैसा नहीं कि एक दिन में एक कारीगर दो जोड़ी कपड़े सिल ले, तो बहुत। वहाँ एक आदमी एक बार में कोई एक काम करता है। जैसे कुछ लोग सिर्फ कालर सिलते हैं। कुछ आस्तीन सिलते हैं। कुछ आगा तैयार करते हैं। कुछ पीछा तैयार करते हैं। कुछ कारीगरों के पास आस्तीन जोड़ने का काम रहता है। कुछ के पास कालर फिट करने का काम। कुछ कारीगर 'फाइनल टच' देकर कपड़े को तैयार माल वाले सेक्शन भेज देते हैं। जहाँ कपड़े पर प्रेस किया जाता है और उन्हें डब्बों में बंद किया जाता है। एकदम किसी फैक्ट्री की तरह होता है सारा काम।

यूनुस इच्छा जाहिर करता कि कपड़ा कटिंग का काम मिल जाए या सिलाई मशीन में ही बैठने दिया जाए।

बन्ने उस्ताद हिकारत से हँसकर जवाब देते - 'अभी तो मँजाई चल रही है मियाँ, इतनी जल्दी उस्तादी सिखा दी तो मेरी हँसाई होगी। लोग कहेंगे कि बन्ने उस्ताद ने कैसा शागिर्द तैयार किया है।'

इसके अलावा बन्ने उस्ताद की एक आदत उसे नापसंद थी। बन्ने उस्ताद काम सिखाते वक्त उसकी जाँघ पर चिकोटियाँ काटते, पीठ थपथपाते और उनका हाथ कब बहककर कमर के नीचे पहुँच जाता उन्हें खयाल ही न रहता।

उनकी अनुपस्थिति में लड़के उस्ताद की हरकतों पर खूब मजाक किया करते।

चुँधियाई आँखों और मैले दाँतों वाले बन्ने उस्ताद के मुँह से बदबू फूटा करती थी।

जल्द ही बन्ने उस्ताद की 'शागिर्दी' से उसने स्वयं को आजाद कर लिया। उसने जान लिया था कि टेलर मास्टर कभी लखपति बनकर ऐश की जिंदगी नहीं गुजार पाता। वह तो ताउम्र 'टेलरई' ही करता रह जाता है।

इससे कहीं अच्छा है कि यूनुस मन्नू भाई से स्कूटर, मोटर-साइकिल की मिस्त्रीगिरी सीखे।

पंद्रह

यूनुस की विद्यालयीन पढ़ाई ही खटाई में पड़ी थी, किसी विश्वविद्यालय का मुँह देखना उसके नसीब में कहाँ था?

वैसे भी हर किसी के मुकद्दर में विश्वविद्यालयीन पढ़ाई का 'जोग' नहीं होता।

फुटपथिया लोगों का अपना एक अलग विश्वविद्यालय होता है, जहाँ व्यावहारिक शास्त्र की तमाम विद्याएँ सिखाई जाती हैं।

हाँ, फर्क बस इतना है कि इन विश्वविद्यालयों में 'माल्थस' की थ्योरी पढ़ाई जाती है न डार्विन का विकासवाद।

छात्र स्वयमेव दुनिया की तमाम घोषित, अघोषित विज्ञान एवं कलाओं में महारत हासिल कर लेते हैं।

प्राध्यापकीय योग्यता के लिए शिक्षा और उम्र का बंधन नहीं होता। वे अनपढ़ हो सकते हैं, बुजुर्ग या बच्चे भी हो सकते हैं। कभी-कभी तो पशुओं के क्रिया-व्यापार से भी ये फुटपथिया विद्यार्थी ज्ञान अर्जित कर लेते हैं।

ये अनौपचारिक प्राध्यापक अपने विद्यार्थियों को जीने की कला सिखाते हैं।

जो विद्यार्थी जितना तेज हुआ, वह उतनी जल्दी व्यावहारिक ज्ञान ग्रहण कर लेता है। संगत के कारण विद्यार्थी निगाह बचा कर गलत काम करने, बहाना बनाने और बच निकलने का हुनर सीख जाता है। यहाँ सिखाया भी तो जाता है कि जो पकड़ा गया वही चोर। जो पकड़ से बचा वह बनता है गलियों का बेताज बादशाह।

इन विश्वविद्यालयों की कक्षाएँ उजाड़-खंडहरात में, गैरेजों में, सिनेमा-हाल और चाय-पान की गुमटियों में लगती हैं।

'प्रेक्टिकल-ट्रेनिंग' के लिए नगर के आवारा-लोफर, गँजेड़ी-भँगेड़ी, दुराचारी-बलात्कारी, युवकों की संगत जरूरी होती है।

बस-ट्रक चालकों और खलासियों से भूगोल, नागरिक शास्त्र और भारतीय दंड विधान का सार सरलता से उनकी समझ में आ जाता है।

मोटर गैरेज में काम सीख कर मेकेनिकल-इंजीनियरिंग और आटो-मोबाइल इंजीनियरिंग का कोर्स पूरा किया जाता है।

दर्जियों की दुकान में बैठकर 'ड्रेस-डिजाइनर' और 'फैशन-टेक्नोलॉजी' की डिग्री मिल जाती है।

नाई की दुकान से 'ब्यूटी पार्लर' का डिप्लोमा मिल जाता है।

सिविल ठेकेदार के पास मुंशीगीरी कर लेने के बाद आदमी आसानी से सिविल इंजीनियर जितनी योग्यता प्राप्त कर लेता है।

विद्युत ठेकेदार के पास काम सीखने पर इलेक्ट्रीशियन का डिप्लोमा मिला समझो।

काम-शास्त्र के सैद्धांतिक पक्ष से वे कमसिनी में ही वाकिफ हो जाते हैं और प्रेक्टिकल का अवसर निम्न-मध्यमवर्गीय समाजों में उन्हें सहज ही मिल जाता है। चचेरे-ममेरे भाई-बहिन, चाचा-मामा, बुआ-चाची-मामी, नौकर-नौकरानी, पिता या अध्यापक, इनमें से कोई एक या अधिक लोग उन्हें वयस्क अनुभवों से मासूम बचपन ही में पारंगत बना देते हैं।

राजनीति-शास्त्र सीखने के लिए कहीं जाने की जरूरत नहीं। आजकल हर चीज में 'पोलिटिक्स' की बू आती है।

यूनुस और उसके जैसे तमाम सुविधाहीन बच्चे ऐसे ही विश्वविद्यालयों के छात्र थे।

बड़े भाई सलीम की असमय मृत्यु से गमजदा यूनुस को एक दिन उसके आटोमोबाइल इंजीनियरिंग के प्राध्यापक यानी मोटर साइकिल मिस्त्री मन्नू भाई ने गुरु-गंभीर वाणी में समझाया था - 'बेटा, मैं पढ़ा-लिखा तो नहीं लेकिन 'लढ़ा' जरूर हूँ। अब तुम पूछोगे कि ये लढ़ाई क्या होती है तो सुनो, एम्मे, बीए जैसी एक डिग्री और होती है जिसे हम अनपढ़ लोग 'एलेलपीपी' कहते हैं। जिसका फुल फार्म होता है, लिख लोढ़ा पढ़ पत्थर, समझे। इस डिग्री की पढ़ाई फर्ज-अदायगी के मदरसे में होती है जहाँ मेहनत की कापी और लगन की कलम से 'लढ़ाई' की जाती है।'

यूनुस मन्नू भाई की ज्ञान भरी बातें ध्यान से सुना करता।

असुविधाओं से भरपूर अव्यवस्थित घरेलू माहौल में स्कूली शिक्षा की किसे फिक्र!

वह अच्छी तरह जानता था कि अकादमिक तालीम उसके बूते की बात नहीं।

उसे भी अब इस 'लढ़ाई' जैसी कोई डिग्री बटोरनी होगी।

इसीलिए वह मन्नू उस्ताद की बात गिरह में बाँध कर रक्खे हुए था।

मन्नू भाई की छोटी सी मोटर-साइकिल रिपेयर की गैरेज थी।

नगर के बाहर पहाड़ी नाले के पुल को पार करते ही दुचकिया, तिनचकिया, चरचकिया, छचकिया जैसी तमाम गाड़ियों की मरम्मत के लिए गैरेज हैं। टायरों में हवा भरने वाले बिहारी मुसलमानों की दुकानें भी इधर ही हैं।

मन्नू भाई की गैरेज पुल पार करते ही पहले मोड़ पर है।

बन्ने उस्ताद के दर्जीगीरी वाले अनुभव से मायूस यूनुस को गैरेज का माहौल ठीक लगा।

गैरेज के अंदर एक लकड़ी का बोर्ड था, जिस पर क्रम से पाना-पेंचिस आदि सजा कर टाँग दिए जाते। यूनुस का काम होता, सुबह मन्नू भाई के घर जाकर उनसे गैरेज की चाभी ले आता। एक बित्ते का एक झाड़ू था, जिससे वह पहले गैरेज के बाहर सफाई करता। फिर गैरेज का शटर उठाता। अंदर रिपेयर के लिए आई स्कूटर-मोटर साइकिलें बेतरतीबी से रखी रहतीं। एक-एक कर तमाम गाड़ियों को वह गैरेज से बाहर निकालता। फिर गैरेज के अंदर झाड़ू लगाता। इस बीच कोई नट-बोल्ट, वाशर या कोई अन्य पार्ट गिरा मिलता तो उसे उठाकर यथास्थान रख देता। मन्नू भाई के आने से पूर्व यदि कोई कस्टमर आता तो वह उनकी समस्या सुनता और उसके लायक रिपेयर का काम होता तो कर देता।

इस छोटी-मोटी रिपेयरिंग से अपना जेब-खर्च बनाता।

रात गैरेज बंद होने से पहले वह तमाम पाना-पेंचिस को जले मोबिल से धोता, पोंछता और फिर उन्हें दीवार पर टँगे बोर्ड पर क्रमानुसार सजा देता।

मन्नू भाई और यूनुस मिलकर मरम्मत के लिए तमाम गाड़ियों को गैरेज के अंदर ठूँसते।

यूनुस जब घर जाने के लिए सलाम करता तो मन्नू भाई उसे रोकते और फिर कभी दस, कभी बीस रुपए का नोट पकड़ा देते।

अपनी इस छोटी-मोटी कमाई से यूनुस बहुत खुश रहता।

नन्हा यूनुस बड़ा जहीन था...

कहा भी जाता है कि ये सिक्खड़े-सरदार और म्लेच्छ-मुसल्ले बड़े हुनरमंद होते हैं। तकनीकी दक्षता में इनका कोई सानी नहीं।

मेहनत और मरम्मत के काम ये कितनी सफाई से करते हैं। नाई, दर्जी और सब्जियों की दुकानें अधिकांशतः मुसलमानों की हैं। अंडा, मुर्गा, मछली और गोश्त की दुकानों पर भी मुसलमानों का कब्जा है।

बाबरी मस्जिद गिराए जाने के बाद नगर में हिंदू कसाइयों ने 'झटका' वाली दुकानें लगाईं। हमीद चिकवा बताता है कि उन लोगों ने अपनी मीटिंग में फैसला लिया है कि 'गर्व से कहो हम हिंदू हैं' का नारा लगाने वाले राष्ट्रीय हिंदू यदि मांसाहारी हैं तो वे मुसलमान चिकवों से गोश्त न खरीदें, बल्कि 'झटका' वाली दुकानों से गोश्त खरीदें।

इससे मुसलमानों के इस एकछत्र व्यवसाय पर कुछ तो प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

सिक्खड़ों को तो सन चौरासी में औकात बता दी गई थी। मुसल्लों को गोधरा के बहाने गुजरात में तगड़ा सबक सिखा दिया गया।

सिख तो समझ गए और मुख्यधारा में आ गए, लेकिन इन म्लेच्छ-मुसलमानों को ये कांग्रेसी और कम्युनिस्ट चने के झाड़ पर चढ़ाए रखते हैं। और वो जो एक ठो ललुआ है, वो चारा डकार कर मुसलमानों का मसीहा बना बैठा है।

यूनूस ने कम उम्र में ही जान लिया था कि उसके अस्तित्व के साथ जरूर कुछ गड़बड़ है।

चौक के तिलकधारी मुनीम जी कहा करते - 'अगर ये हमारे छद्म धर्मनिरपेक्षवादी नपुंसक हिंदू शांत रहें तो 'आर-पार' की बात हो ही जाए। सेकुलर कहते हैं ये शिखंडी साले खुद को।'

उनके हमखयाल चौबेजी हाँ में हाँ मिलाते - 'हिंदू हित की बात करने वाले को ये चूतिए सांप्रदायिक कहते हैं। हमें अछूत समझते हैं।'

शिशु मंदिर के प्रधानपाठक विश्वकर्मा सर कहाँ चुप रहते, वैसे भी उन्हें गुरूर था कि वह इस कस्बे के सर्वमान्य बुद्धिजीवी हैं, किंतु राजनीतिक विचारधारा से प्रेरित मुनीम जी और चौबे जी उन्हें ज्यादा अहमियत नहीं देते - 'अब समय आ गया है कि हम अपना 'होमलैंड' बना लें। इन मुसल्लों को द्वितीय नागरिकता मिले और इन्हें मताधिकार से वंचित किया जाए। तुष्टिकरण की सारी राजनीति स्वमेव खत्म हो जाएगी।'

अपने समय की चुनौतियों से बाखबर और बेखबर यूनुस, मन्नू भाई को काम करते बड़े ध्यान से देखा करता।

उनकी हरेक स्टाइल की नकल किया करता।

मन्नू भाई चाय बहुत पीते थे।

कोई ग्राहक आया नहीं कि आर्डर कर देते - 'यूनुस, तनि भाग कर चारठो चाय ले आ।'

वहीं यूनुस को चाय की आदत पड़ी।

मन्नू भाई को अल्सर हो गया था।

सुनते हैं कि अब वह इस दुनिया में नहीं हैं।

सोलह

मोटर साइकिल मिस्त्री मन्नू भाई के बाद उसे एक और उस्ताद मिला - 'डाक्टर'। यह कोई एमबीबीएस या झोला छाप डाक्टर का जिक्र नहीं, बल्कि सरदार शमशेर सिंह डोजर ऑपरेटर का किस्सा है।

सरदार शमशेर सिंह कहा करता - 'सर दर्द, कमर दर्द, बुखार की दवा लिखने वाला जब डाक्टर कहलाता है तो तमाम रोगों को दूर भगाने वाली दारू की सलाह देने वाले को डाक्टर क्यों नहीं कहा जाता?'

दूसरे डाक्टर वह होते हैं जो किसी खास विषय पर शोध करते हैं और विश्वविद्यालय से उन्हें 'डाक्टरेट' की डिग्री मिलती है। अधिकांश लोगों को यह डिग्री गहन अध्ययन के पश्चात मिलती हैं और कुछ लोगों को उनकी विलक्षण प्रतिभा के कारण विश्वविद्यालय स्वयं 'डीलिट' की मानद उपाधि से सम्मानित करता है।

सरदार शमशेर सिंह को दारू के क्षेत्र में विशेषज्ञता प्राप्त थी, इसलिए फुटपथिया विश्वविद्यालय के कुलपतियों ने उसे मानद 'डाक्टरेट' की उपाधि से सम्मानित किया था। डाक्टर की शागिर्दी में यूनुस 'बुलडोजर' और 'पेलोडर' चलाना सीख गया। 'पोकलैन' भी वह बहुत बढ़िया चलाता।

'पोकलैन' हाथी की सूँड़ की तरह का एक खनन-यंत्र है, जिसके 'बूम' और 'बकेट' का 'मूवमेंट' ठीक हाथी के सूँड़ के जैसा है। जिस तरह से कोई हाथी अपनी सूँड़ की मदद से ऊँचे-ऊँचे पेड़ों से हरी-भरी डालियाँ तोड़कर उसी सूँड़ की सहायता से ग्रास अपने मुँह में डालता है, उसी तरह से 'पेलोडर' मशीन काम करती है।

शायद दुनिया के तकनीशियनों, अभियंताओं, सर्जकों और वास्तुकारों ने प्राकृतिक तत्वों और जीव-जंतुओं की उपस्थिति से प्रेरणा प्राप्त कर अपनी कुशलता और दक्षता में वृद्धि की है।

कोयला की खुली खदानों और धरती की काया-कल्प कर देने वाली परियोजनाओं की जान हैं ये भीमकाय उपकरण। चाहे विशालकाय पहाड़ कटवा कर चटियल मैदान बना दें या बड़ी-बड़ी नहरें खोद डालें।

यूनुस के हुनर की सभी तारीफ करते। वह 'डाक्टर' का चेला जो ठहरा!

'डाक्टर' अब रिटायर हो चुका है।

अपने खालू का यूनुस इसीलिए अहसान माना करता कि उन्होंने 'डाक्टर' से उसके लिए सिफारिश की। 'डाक्टर' के कारण ठेकेदारों में आज उसकी अपनी 'मार्केट-वैल्यू' है।

खाला ने उसे काफी समझाया था कि वह अपनी जिंदगी को खुद एक नए साँचे में ढाले। अपने बड़े भाई सलीम की तरह हड़बड़ी न करे।

जो भी काम सीखे पूरी लगन और ईमानदारी के साथ सीखे। खाला कहा करती थी - 'सुनो सबकी, लेकिन करो मन की। दूसरों के इशारे पर नाचना बेवकूफी है।'

इसीलिए काम सीखने के लिए यूनुस ने खाला की सलाह मानी।

उसने 'डाक्टर' की दारू या अन्य ऐब नहीं बल्कि उसके हुनर को आत्मसात किया। यही यूनुस की पूँजी थी।

यूनुस ने कोई कसर न छोड़ी काम सीखने में।

'डाक्टर' को स्वीकार करना पड़ा कि उसने आज तक इतने चेले बनाए किंतु इस 'कटुए' जैसा एक भी नहीं। बहुत से शागिर्द बने, जिनने उससे शराब पीनी सीखी। नशे में धुत रहना सीखा। रंडीबाजी सीखी किंतु काम न सीखा।

इसीलिए यूनुस को वह कहा करता - 'ये बड़ा लायक चेला निकला।' यूनुस को अब भी सिहरन होती है, जाड़े की उन कड़कड़ाती अँधेरी रातों को यादकर। जब कोयले की ओपन-कास्ट खदान के 'डंपिंग-एरिया' में वह डाक्टर के साथ काम सीखने जाया करता था।

सिंगरौली क्षेत्र मे कोयले की बड़ी-बड़ी खुली खदानें हैं।

मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश की सीमा पर कोयले का अकूत भडार है सिंगरौली क्षेत्र में। रिहंद नदी पर बांधा गया विशालकाय बाँध। कोयले और पानी के योग से बिजली बनाने के बड़े-बड़े विद्युत-गृह। लाखों टन कोयले से बनने वाली हजारों मेगावाट बिजली। इस बिजली की राष्ट्रीय पूर्ति में सिंगरौली क्षेत्र की पर्याप्त हिस्सेदारी है।

सिंगरौली क्षेत्र देश का एक प्रमुख ऊर्जा-तीर्थ है।

एक बार में एक सौ बीस टन कोयला ढोकर चलने वाले भीमकाय डंपर। सैकड़ों टन बारूद की ब्लास्टिंग से चूर-चूर चट्टानों का पहाड़ अपनी पीठ पर उठाए, अलमस्त हाथी की तरह झूम-झूम कर चलते डंपर। उन डंपरों के चलने से ऐसा शोर होता ज्यों सैंकड़ों सिंह दहाड़ रहे हो। एक-एक डंपर एक बड़ी फैक्टरी के बराबर हैं।

डंपर के चलने के लिए चौड़ी सड़कें बनाई जाती हैं। इन्हें हाल-रोड कहा जाता है। हाल-रोड पर डंपर चलने के पूर्व पानी के टैंकर से जल-सिंचन किया जाता है ताकि धूल के बादल न उठें। बालुई पत्थर की धूल फेफड़े के लिए नुकसानदेह होती है। फेफड़े के छिद्रों में कोयला और पत्थर की धूल के असुरक्षित सेवन से खदान-कर्मियों को न्यूमोकोनियोसिस, सिलकोसिस जैसी बीमारियाँ हो जाती हैं।

सिंगरौली क्षेत्र की कोयला खदानों में बड़ी-बड़ी ड्रेगलाइनें हैं। जमीन की सतह से डेढ़ सौ फीट तक गहरे से मिट्टी खोदकर तीन सौ फीट की दूरी पर ले जाकर 'डंप' करने वाला यंत्र 'ड्रेगलाइन'। यूनुस बड़े शौक से उस भीमकाय यंत्र को चलते हुए देखा करता, एकदम मंत्रमुग्ध होकर। रस्सों के सहारे 'बकेट' का संचालन। लंबे-लंबे 'बूम' पर घिर्रियों के सहारे रस्सों का अद्भुत खेल। 'डाक्टर' उर्फ शमशेर सिंह एक दिन यूनुस को ड्रेगलाइन दिखाने ले गए। पास जाकर उसे डर लगा था। रात का समय। सैकड़ों बल्बों के प्रकाश से ड्रेगलाइन का चप्पा-चप्पा प्रकाशमान था। इतनी रोशनी कि आँखें चुंधिया जाएँ। इतने बल्ब कि गिना न जा सके। मार्चिंग पैड से लेकर बूम के टॉप तक तेज रोशनी के सर्चलाइटें। 'डाक्टर' उसे एक जीप में बिठाकर ड्रेगलाइन तक ले गया था। जीप पाँच सौ मीटर की दूरी पर रोक दी गई। वहाँ से अब पैदल जाना था। उतनी बड़ी ड्रेगलाइन के समक्ष इंसान कितना बौना नजर आता है। हाथी के समीप चींटी की सी हैसियत। ड्रेगलाइन एक घंटे में एक हजार मजदूरों के एक माह काम के बराबर मिट्टी हटाती है। इसे मात्र एक आदमी चलाता है। ड्रेगलाइन-आपरेटर। जिसका वेतन खदान के सभी श्रमिकों से ज्यादा होता है।

ड्रेगलाइन के पीछे दो डोजर लगातार चल रहे थे। वे ड्रेगलाइन की अगली 'सिटिंग' के लिए समतल जगह बना रहे थे।

डाक्टर ने यूनुस से कहा कि घूमती हुई ड्रेगलाइन में चढ़ना होगा। ड्रेगलाइन का मार्चिंग-पैड ही जमीन से बीस फुट ऊँचा था। उस पर सीढ़ी लगी थी। डाक्टर उचक कर उस सीढ़ी पर चढ़ गया और जल्दी-जल्दी ऊपर चढ़ने लगा। यूनुस ने भी उसका पीछा किया। अब वे मार्चिंग-पैड पर थे। ड्रेगलाइन अपनी जगह पर बैठे-बैठे घूम-घूम कर मिट्टी उठाकर फेंक रहा था। फिर डाक्टर पचास फुट ऊँचे मशीन-रूम की तरफ जाने वाली सीढ़ी पर चढ़ने लगा। यूनुस भी पीछे-पीछे चढ़ गया। मशीन-रूम से गरम हवा निकल रही थी, जिससे अब ठंड लगनी कम हो गई थी। मशीन-रूम का दरवाजा बंद था। डाक्टर ने धक्का मारकर दरवाजा खोला तो यंत्रों के चलने से उत्पन्न भयानक शोर से लगा कि कान के पर्दे फट जाएँगे। यूनुस ने कान हाथों से बंद कर लिए। मशीन-रूम में बड़े-बड़े मोटर, जेनेरेटर और जाने कितने उपकरण लगे थे। जिनके चलने से वहाँ शोर था।

डाक्टर युनुस को ड्रेगलाइन की क्रियाविधि के बारे में बताने लगा। डंप-रोप को घुमाने के लिए ड्रम लगा हुआ है। ड्रेग-रोप घुमाने के लिए ड्रम किधर है। यूनुस ने जाना कि आठ-दस फैक्टरियों के बराबर ड्रेगलाइन में मोटर-जेनेरेटर लगे हैं।

फिर वे लोग आपरेटर केबिन की तरफ गए। दो दरवाजा खोलने पर एक कारीडार मिला। जिस पर कालीन बिछा हुआ था। यहाँ तकनीशियन आराम कर रहे थे। डाक्टर ने यहाँ अपना जूता उतारा। यूनुस ने भी जूते उतारे। फिर एक काँच का दरवाजा खोल कर वे आपरेटर केबिन में जा पहुँचे। एकदम वातानुकूलित कमरा। काँच का घर। पीछे तरफ वायरलैस-सेट। बीच में आपरेटर की सीट। जिस पर एक सरदार जी आराम से बैठकर हाथ और पैर के संचालन से ड्रेगलाइन चला रहे थे। यूनुस को लेकर डाक्टर सामने की तरफ आ गया। यहाँ से नीचे कोयले की परत दिखलाई दे रही थी। जिसके ऊपर के ओवर-बर्डन को ड्रेगलाइन की बकेट से उठाकर सरदार जी तीन सौ फुट दूर किनारे डाल रहे थे। इस फेंकी हुई मिट्टी का एक नया पहाड़ बनता जा रहा था। बड़ी लय-ताल बद्ध क्रिया थी ड्रेगलाइन की।

ड्रेगलाइन-आपरेटर के सामने और दोनों तरफ जाने कितने लीवर, बटन और सिग्नलिंग-लाइट्स लगे हुए थे। बीच-बीच में सरदारजी कंट्रोल-रूम से वायरलेस के जरिए बात करता जाता था। फिर सरदारजी ने डाक्टर की फरमाइश पर असिस्टेंट से कहा कि डाक्टर को 'पाँगड़ा' सुनवा दे यारा!

यूनुस ने उस दिन वहाँ चाय भी पी। आपरेटर की सुख-सुविधा की वहाँ पूरी व्यवस्था थी। यदि वह थक जाए या उसे हाजत लगी हो तो असिस्टेंट मौजूद रहता, जो ड्रेगलाइन आपरेशन जारी रखता।

ऐसी ही एक और हैरत-अंगेज मशीन है ड्रिलिंग-मशीन। ये जमीन में एक सौ पचास फुट गहरे और एक फुट व्यास के छेद करती है, जिनमें डेढ़ से दो टन बारूद डालकर ब्लास्टिंग की जाती है। एक बार में चार-पाँच सौ टन बारूद की ब्लास्टिंग होती है। आस-पास का इलाका दहल जाता है। धूल और रंग-बिरंगी गैसों के बादल काफी देर तक छाए रहते हैं। कहते हैं कि सिंगरौली क्षेत्र में खदान खुलने से पहले हर तरह के जंगली जानवर रहा करते थे। यह एक अभयारण्य की तरह था। खदान खुलने से जंगलात कम हुए। नगर बसे। जानवर जाने कहाँ गायब हो गए। आज भी सियार, मोर, लोमड़ी और बनमुर्गियाँ यहाँ नजर आते हैं। कई लोग बाघ आदि देखने का दावा भी करते हैं।

धरती के गर्भ में सदियों से छिपी हैं कोयले की मोटी परतें।

कोयले की परत के ऊपर सख्त बालुई परतदार तलछट चट्टानें हैं।

यूनुस ने ओवरमैन मुखर्जी दा से एक बार पूछा था कि दादा, ये कोयला बना कैसे?

बांग्लादेश से राँची आकर बसे मुखर्जी दा के सामने के दो दाँत टूटे हुए हैं। वह कुछ भी कहें, 'हत् श्शाला' कहे बिना अपनी बात पूरी न करते।

उन्होंने बताया कि करोड़ों बरस पूर्व यहाँ घने जंगल हुआ करते थे। फिर महाजलप्लावन हुआ होगा और वे सारे जंगलात पानी में डूब गए होंगे। पेड़-पौधे, वन्य जंतु, वनस्पतियाँ आदि सड़-गलकर कार्बनिक पदार्थों में तब्दील हो गए। कालांतर में उन पर बालू-मिट्टी की परतें जमती चली गईं। धीरे-धीरे उच्च ताप और दाब सहते-सहते जंगलात कोयले में बदल गए होंगे। इसीलिए अभी भी इन कोयले की परतों में वृक्षों के फासिल्स यानी जीवाश्म पाए जाते हैं।

कोयला कहीं-कहीं धरती की सतह के काफी नीचे मिलता है। उसकी क्वालिटी अच्छी होती है। उस कोयले को निकालने के लिए सुरंगें बनाई जाती हैं या चानक खोदे जाते हैं। ऐसी खदानों को अंडर-ग्राउंड खदानें कहा जाता है।

जिन स्थानों में कोयले की परत धरती की सतह से थोड़ा-बहुत नीचे मिलती है, उन कोयले की परतों का खनन 'ओपन-कास्ट' विधि से किया जाता है। ऐसी खदानें ओपन-कास्ट माइन या खुली खदानें कहलाती हैं।

ब्लास्टिंग के बाद चूर्ण हुई चट्टानों को शावेल जैसे उत्खनन यंत्र खोदकर डंपरों पर लाद देते हैं। इन चट्टानों के चूर्ण को खनन-शब्दावली में 'ओवर-बर्डन' कहा जाता है। ओवर-बर्डन को डंपरों के जरिए डंपिंग एरिया में भेजा जाता है। 'डंपिंग एरिया' में ओवर-बर्डन डंप होते-होते एक पहाड़ सा बन जाता है।

सदियों पुराने पहाड़ कटकर ओवर-बर्डन के नए पहाड़ों में बदल जाते हैं। ओवर-बर्डन के पहाड़ इंसान के हाथ की रचना हैं। इन नए पहाड़ों की चोटियों को समतल कर उन पर वृक्षारोपण किया जाता है।

कोयला निकल जाने के बाद बाकी बचे गड्ढे को कृत्रिम झील में बदल दिया जाता है। इसी डंपिंग-एरिया में बुलडोजर चला करते हैं, जो डंपर द्वारा लाई गई चट्टानों को 'डोज' कर समतल बनाता है, ताकि उन पर दुबारा डंपर आकर ओवर-बर्डन की डंपिंग कर सकें।

यूनुस उसी बुलडोजर की आपरेटरी सीखने खदान आया करता।

डंपिंग-एरिया में शेर की तरह दहाड़ते डंपर आते तो उन्हें देख कलेजा दहल जाता। डंपर आपरेटर जब रिवर्स-गियर लगाता तो उसका आडियो-विजुअल अलार्म बजने लगता -पीं पाँ पीं पांकृ...

डंपर पीछे चलकर बुलडोजर से बनाई गई मेड़ पर आकर रुकता। फिर डंपर आपरेटर 'डंप लीवर' उठाता और ओवर-बर्डन का ढेर भरभराकर सैकड़ों फुट नीचे गहराई में गिर जाता। कुछ माल मेड़ पर बच जाता जिसे डोजर-आपरेटर, डोजर की सहायता से साफ करता, ताकि अगला डंपर उस जगह पर आकर सुरक्षित 'अनलोड' कर सके।

डंपिंग क्षेत्र में किनारे की मेड़ बनाना ही असली हुनर का काम है। उस मेड़ को 'बर्म' कहा जाता है। अगर ये बर्म कमजोर बने तो डंपर के अनियंत्रित होकर नीचे लुढ़कने का खतरा बना रहता है। असुरक्षित डंपिंग-क्षेत्र में कई दुर्घटनाएँ घट चुकी हैं।

इससे करोड़ों रुपए की लागत से आयातित डंपर दुर्घटनाग्रस्त होते हैं और कई बार आपरेटर की जान भी जाती है। बुलडोजर से डोजिंग करना एक तरह की कला है। जिस तरह मूर्तिकार छेनी-हथोड़ी से बेजान पत्थरों पर जान फूँकता है, उसी तरह कुशल डोजर-आपरेटर, डोजर की ब्लेड के कलात्मक इस्तेमाल से ऊबड़-खाबड़ धरा का रूप बदल देता है।

यूनुस अपनी बेजोड़ मेहनत और लगन से जल्द ही इस हुनर में माहिर हो गया।

इससे उसके पियक्कड़ उस्ताद 'डाक्टर' का भी लाभ हुआ।

सेकेंड शिफ्ट की ड्यूटी में शाम घिरते ही यूनुस को बुलडोजर पकड़ा कर 'डाक्टर' दारू-भट्टी चला जाता।

कोयला खदान के श्रमिकों और कुछ अधिकारियों के मन में ये धारणा है कि दारू-शराब फेफड़े में जमी कोयले की धूल को काट फेंकती है। साथ ही एक नारा और गूँजता कि दारू के बिना खदान का मजदूर जिंदा नहीं रह सकता।

इसीलिए कोयला-खदान क्षेत्र में दारू के अड्डे बहुतायत में मिलते हैं।

लोक कहते कि मरने के बाद कोयला खदान के मजदूरों को जलाने में लकड़ी कम लगेगी, क्योंकि उनके फेफड़े में वैसे भी कोयले की धूल जमी होगी, जो स्वतः जलेगी।

मुखर्जी दा कहते - 'ये आदमी भी श्शाला गुड क्वालिटी का कोयला होता है।'

यूनुस ने कभी दारू नहीं पी।

हो सकता है इसके पीछे खाला-खालू का डर हो, या मन में बैठी बात कि मुसलमानों के लिए शराब हराम है। ठीक इसी तरह यूनुस बिना तस्दीक के बाहर गोश्त नहीं खाता। उसे पक्का भरोसा होना चाहिए कि गोश्त हलाल है, झटका नहीं। दोस्तों के साथ पार्टी-वार्टी में वह मछली का प्रोग्राम बनवाता या फिर शाकाहारी खाना खाता।

ओपन कास्ट कोयला खदान की हैवी मशीनों को चलाना सीखने के बाद उसमें आत्मविश्वास जागा।

सरकारी नौकरी तो मिलने से रही, हाँ अब वह बड़ी आसानी से किसी प्राइवेट नौकरी में तीन-चार हजार रुपए महीना का आदमी बन गया था।

खालू ने यूनुस के लिए कोयला-परिवहन करने वाली कंपनी 'मेहता कोल एजेंसी' यानी 'एमसीए' के मैनेजर से बात की।

मैनेजर ने जवाब दिया कि जगह खाली होने पर विचार किया जाएगा।

खालू जान गए कि प्राइवेट में भी हुनर की बदौलत नौकरी का जुगाड़ कर पाना उनके बस की बात नहीं, इसलिए वह हार मान गए।

लेकिन खाला कहाँ हार मानने वाली थीं।

मजदूर यूनियन के नेता चौबेजी से खाला की अच्छी बोलचाल थी। चौबेजी उनके मैके गाँव के थे। कॉलरी में इस तरह के संबंध काफी महत्व रखते हैं।

खाला के निमंत्रण पर चौबेजी एक दिन क्वाटर आए तो यूनुस दौड़कर उनके लिए दो बीड़ा पान ले आया। पान चबाते हुए चौबेजी ने कहा था - 'सबेरे दस बजे मेहतवा के आफिस पर लइकवा को भेज दें। आगे जौन होई तौन ठीकै होई।'

और वाकई, चौबेजी की बात पर उसे अस्थायी तौर पर काम मिल गया।

'परमानेंट' के बारे में चौबेजी को विश्वास दिलाया गया कि काम देखकर जल्द ही बालक को परमानेंट कर दिया जाएगा।

एक बात जरूर यूनुस को सुना दी गई कि कंपनी अपनी आवश्यकतानुसार, काम पड़ने पर अपने कर्मचारियों को देश के किसी भी हिस्से में काम करने भेज सकती है। एमसीए का कारोबार बिहार, बंगाल, झारखंड, एमपी और छत्तीसगढ़ में फैला है। इनमें से किसी भी प्रांत में उन्हें भेजा जा सकता है।

मरता क्या न करता, यूनुस ने तमाम शर्तें मान लीं।

इसके अलावा कोई चारा भी तो न था।

भीमकाय सरकारी डंपरों में लदकर कोयला कोल-यार्ड तक पहुँचता।

वहाँ उनमें से शेल-पत्थर आदि को छाँटा जाता है। कोल-यार्ड को पहली निगाह में कोई बाहरी आदमी कोयला-खदान ही समझेगा। सैकड़ों एकड़ में फैले विस्तृत-क्षेत्र में कोयले के टीले। इन्हें अब प्राइवेट दस-टनिया डंपरों में भरकर रेलवे साइडिंग तक पहुँचाने का काम एमसीए का था। इन दस-टनिया डंपरों से सीधे ग्राहकों तक भी कोयला पहुँचाया जाता।

कोयला-यार्ड में पेलोडर मशीन से दस-टनिया डंपरों में कोयला भरा करता था यूनुस। उसकी कार्यकुशलता, लगनशीलता, कर्मठता और मृदु व्यवहार के कारण मुंशी-मैनेजर उसे बहुत मानते थे। कोई उसे छोड़ने को तैयार नहीं था।

न जाने क्यों ऐसे हालात बने कि उसे खाला का घर छोड़ने को निर्णय लेना पड़ गया।

वैसे भी उसे लग रहा था कि उसका दाना-पानी अब उठा ही समझो। वो तो अच्छा हुआ कि बड़े भाई सलीम की तरह अकुशल श्रमिकों की श्रेणी में उसकी गिनती नहीं थी। उसकी एक 'मार्केट वैल्यू' बन चुकी है। उसे मालूम था कि इस बहुत कुछ पाने के लिए वह ढेर सारा खो भी रहा है। यानी तपती-चिलचिलाती धूप में घनी आम की छाँह जैसी अपनी सनूबर को...

वह सनूबर को दिल की गहराइयों से प्यार करता था।

फिल्म 'मुकद्दर का सिकंदर' का एक मशहूर गाना वह अक्सर गुनगुनाया करता -'ओ साथी रे, तेरे बिना भी क्या जीना।' बिग बी अमिताभ की तर्ज पर इसे यूँ भी कहा जा सकता है - 'सनूबर के बिना जीना भी कोई जीना है लल्लू, अंय...'

क्या अब वह सनूबर से कभी मिल पाएगा?

यूनुस जानता है कि वह सनूबर के लायक नहीं।

मखमल में टाट का पैबंद, यही तो खाला ने उसके बारे में कहा था।

खाला जानती थी कि वह सनूबर को चाहता है। सनूबर भी उसे पसंद करती है, लेकिन सिर्फ एक-दूसरे को चाह लेने से कोई किसी की जीवन-संगिनी तो बन नहीं सकती।

यूनुस के पास सनूबर को खुश रखने के लिए आवश्यक संसाधन कहाँ?

'माना कि दिल्ली मे रहोगे, खाओगे क्या गालिब?'

अब सनूबर उसकी कभी न हो पाएगी!

दुनिया में कुछ इंसान भाग्यवश स्वर्ग के सुख भोगते हैं और कुछ इंसानों के छोटे-छोटे स्वप्न, तुच्छ सी इच्छाएँ भी पूरी नहीं हो पाती हैं... क्यों?

ऐसे ही कितने सवालों से जूझता रहा यूनुस...

सत्रह

प्लेटफार्म के मुख्य-द्वार पर एक लड़की दिखी।

यूनुस चौंक उठा।

कहीं ये सनूबर तो नहीं।

वैसी ही पतली-दुबली काया।

उस लड़की के पीछे एक मोटा आदमी और ठिगनी औरत थी, जो शायद उसके माँ-बाप हों।

वे प्रथम श्रेणी के प्रतीक्षालय की तरफ जा रहे थे।

यूनुस सनूबर को बड़ी शिद्दत से याद करने लगा।

उसे याद आने लगीं वो सब बातें, जिनसे शांत जीवन में हलचल मची।

जमाल साहब का खाला के घर में प्रभाव बढ़ता गया। हरेक मामलात में उनकी दखलंदाजी होने लगी।

रमजान के महीने में वह रात को खाला के घर में ही रुकने लगे। रमजान में सुबह सूरज उगने से पूर्व कुछ खाना पड़ता है, जिसे सेहरी करना कहते हैं। गेस्ट हाउस में कहाँ ताजा रोटी रात के दो-तीन बजे बनती। इसलिए खाला की कृपा से ये जमाल साहब शाम को जो घर आते तो फिर सुबह फजिर की नमाज के बाद ही वापस गेस्ट-हाउस जाते।

ईद में वह नागपुर जाते, लेकिन खाला और खालू की जिद के कारण वह अपने माता-पिता और भाई-बहनों के पास नहीं जा पाए।

जाने कैसा जादू कर रखा था खाला ने उन पर...

असली कारण तो यूनुस को बाद में पता चला।

हुआ ये कि इस बीच एक ऐसी बात हुई कि यूनुस को खाला के घर अपनी औकात का अंदाजा हुआ।

उस दिन उसने जाना कि यदि यहाँ रहना है तो अपमानित होकर रहना होगा।

उसने जाना कि पराधीनता क्या होती है?

उसने जाना कि गरीबी इंसान का सबसे बड़ा दुश्मन है।

उसने जाना कि पराश्रित होकर जीने से अच्छा मर जाना है।

और उसी समय उसके मन में अपने परों के भरोसे अपने आकाश में उड़ने की इच्छा जागी।

हुआ ये कि सनूबर ने यूनुस के कपड़े बिना धोए यूँ ही फींच-फाँच कर सुखा दिए थे। कपड़ों में साबुन लगाया ही नहीं था।

ग्रीस-तेल और पसीने की बदबू कपड़े में समाई हुई थी।

यूनुस का पारा सातवें आसमान में चढ़ गया।

उसने आव देखा न ताव, सनूबर की पिटाई कर दी।

सनूबर चीख-चीख कर रोती रही।

खाला ने यूनुस को जाहिल, गँवार, खबीस, राच्छस, भुक्खड़, एहसान-फरामोश और भगोड़ा आदि जाने कितनी उपाधियों से नवाजा।

यूनुस उस दिन ड्यूटी गया तो फिर घर लौटकर न आया। उसने कल्लू के घर रहने की ठान ली थी। जैसे अन्य लड़के जीवन गुजार रहे हैं, वैसे वह भी रह लेगा। खाला के घर में हुई बेइज्जती से उसका मन टूट चुका था।

दूसरे दिन जब वह घर न लौटा तो खालू स्वयं एमसीए की वर्कशाप में आए। उन्होंने यूनुस को घूरकर देखा।

फिर पूछा - 'घर काहे नहीं आता बे!'

यूनुस खालू से बहुत डरता था।

उसकी रूह काँप गई।

उसने कहा - 'ओवर-टाइम कर रहा था। आज आऊँगा।'

खालू मुतास्सिर हुए।

उसकी जान बची।

शाम ड्यूटी से छूटने पर उसने मनोहरा के होटल से गर्मागर्म समोसे खरीदे। साथ में इमली की खटमीठी चटनी रखवाई। सनूबर को समोसे बहुत पसंद हैं।

वाकई, उसे किसी ने कुछ न कहा।

सभी ने दिल लगाकर समोसे खाए।

खाला के कहने पर सनूबर ने दो समोसे अपने जमाल अंकल के लिए रख दिए।

उस रात सभी ने लूडो खेली।

जमाल अंकल, खाला, सनूबर और यूनुस।

यूनुस के बगल में सनूबर थी और उसके बगल में जमाल अंकल। टी-टेबल के चारों तरफ बैठे थे वे।

यूनुस ने खेल के दरमियान महसूस किया कि टेबल के नीचे एक दूसरा खेल जारी है। जमाल अंकल के पैर सनूबर के पैर से बार-बार टकराते हैं। ऐसे संपर्क के दौरान दोनों बात-बेबात खूब हँसते हैं।

उसके पल्टे हुए गुलाबी होंठ जब हँसने की मुद्रा में होते तो यूनुस को दीवाना बना जाते थे, लेकिन आज उसे वे होंठ किसी चुड़ैल के रक्त-रंजित होठों की तरह दिखे।

उसे सनूबर की बेवफाई पर बड़ा गुस्सा आया।

उस रात खालू की नाइट-शिफ्ट थी।

खालू खाना खाकर ड्यूटी चले गए।

जमाल साहब भी जाना चाहते थे कि टीवी पर गुलाम अली की गजलों का कार्यक्रम आने लगा।

'चुपके-चुपके रात-दिन आँसू बहाना याद है

हमको अब तक आशिकी का वो जमाना याद है'

मुरकियों वाली खनकदार आवाज में गुलाम अली अपनी सुरों का जादू बिखेर रहे थे। यूनुस भी गुलाम अली को पसंद करता था, लेकिन जमाल साहब की रुचि जानकर उसे जाने क्यों गुलाम अली की आवाज नकियाती सी लगी। आवाज ऐसे लगी जैसे पान की सुपारी गले में फँसी हुई हो।

जैसे जुकाम से नाक जाम हो।

वह टीवी के सामने से हट गया।

अंदर किचन में उसका बिस्तर बिछता था।

चटाई के साथ गुदड़ी लिपटी रहती। सुबह चटाई लपेट दी जाती और रात में वह सोने से पूर्व चटाई बिछा लेता। ओढ़ने के लिए एक चादर थी। तकिया वह लगाता न था।

किचन की लाइट बंद हो तब भी बाहर आँगन की रोशनी खिड़की से छनकर किचन में आती। उसे उस धुँधली रोशनी में सोने की आदत थी।

टीवी वाले कमरे से ठहाके गूँज रहे थे।

यूनुस के कान में कुछ अफवाहें पड़ चुकी थीं कि जमाल साहब बड़ा शातिर आदमी है। नागपुर में 'डोनेशन' वाले इंजीनियरिंग कॉलेज से पढ़ कर निकला है जमाल साहब। सुनते हैं कि वहाँ वह गुंडा था गुंडा।

उसकी खूब चलती थी वहाँ।

बाहरी लड़कों से महीना वसूली करता था जमाल साहब।

खालू ने उसे घर घुसा कर अच्छा नहीं किया है।

एक के मुँह से यूनुस ने सुना कि जमाल साहब की नजर खुली बोरी और बंद बोरी की शक्कर, दोनों में है।

खुली बोरी और बंद बोरी की बात यूनुस समझ सकता था, क्योंकि फुटपाथी विश्वविद्यालय के कोर्स के मुहावरों में ये भी था।

खुली बोरी यानी खाला और बंद बोरी माने सनूबर!

यूनुस को नींद नहीं आ रही थी।

गुलाम अली की आवाज किसी तेज छुरी की तरह उसकी गर्दन रेत रही थी -

'तुम्हारे खत में नया इक सलाम किसका था

न था रकीब तो आखिर वो नाम किसका था'

'वफा करेंगे निबाहेंगे बात मानेंगे

तुम्हें भी याद है कि ये कलाम किसका था'

सनूबर की खिलखिलाहट सुनकर यूनुस का दिल रो रहा था।

उसने करवट लेकर अपने कान को कुहनी से दबा लिया।

आवाज मद्धम हो गई।

नींद लाने के लिए कलमे का विर्द करने लगा -

'ला इलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह।'

पता नहीं उसे नींद आई या नहीं, लेकिन रात अचानक उसे अपना पैजामा गीला लगा।

हाथ से टटोला तो गीली-चिपचिपी हो गई उँगलियाँ, यानी...

उसका दिमाग खराब हो गया।

नींद उचट गई।

पेशाब का दबाव मसाने पर था।

वह उठा।

खिड़की के पल्लों से छनकर पीली रोशनी के धब्बे कमरे में फैले हुए थे। ठीक उसके पैजामे में उतर आए धब्बों की तरह।

उसे कमजोरी सी महसूस हो रही थी। जाने क्यों स्वप्न में हुए स्खलन के बाद उसकी हालत पस्त हो जाती है।

उठने की हिम्मत न हुई।

वह कुछ पल बैठा रहा।

तभी उसके कान खड़े हुए।

पहले कमरे से फुसफुसाने की आवाज आ रही थी। तख्त भी हौले-हौले चरमरा रहा था।

यूनुस ने किचन से लगे बच्चों के कमरे में झाँका। वहाँ सनूबर अपने अन्य भाई-बहनों के साथ सोई हुई थी।

इसका मतलब पहले कमरे में खाला हैं। फिर उनके साथ कौन है? खालू की तो नाइट शिफ्ट है।

यूनुस के मन में जिज्ञासा के साथ भय भी उत्पन्न हुआ।

वह दबे पाँव पहले कमरे के दरवाजे की झिर्रियों से अंदर झाँकने लगा।

पहले कमरे में भी अँधेरा ही था।

हाँ, रोशनदान के जरिए सड़क के खंभे से रोशनी का एक बड़ा टुकड़ा सीधे दीवाल पर आ चिपका था।

अँधेरे की अभ्यस्त उसने तख्त पर निगाहें टिकाईं।

देखा खाला के साथ जमाल साहब आपत्तिजनक अवस्था में हैं।

उसकी टाँगें थरथराने लगीं।

उसका कंठ सूख गया।

हाथ में जुंबिश होने लगी।

दिल की धड़कनें तेज क्या हुईं कि उसका मानसिक संतुलन गड़बड़ा गया।

इसी ऊहा-पोह में वहाँ से भागना चाहा कि उसके पैरों की आहट सुनकर खाला की दबी सी चीख निकली।

यूनुस तत्काल अपने बिस्तर पर आकर लेट गया।

पहले कमरे की गतिविधि में विघ्न पैदा हो चुका था। वहाँ से आने वाली आहटें बढ़ीं। फिर बाहर का दरवाजा खुलने की आवाज आई। फिर स्कूटर के स्टार्ट होने की आवाज आई और लगा कि फुर्र से उड़ गई हो स्कूटर।

यूनुस को काटो तो खून नहीं।

आँखें बंद किए, करवट बदले वह अब खाला की हरकतों का अंदाजा लगाने लगा।

लगता है खाला ने पहले बच्चों के कमरे की लाइट जलाकर वहाँ का जायजा लिया है।

अब वह किचन की तरफ आ रही हैं।

लाइट जलाकर यहाँ भी वह यूनुस के पास कुछ देर खड़ी रहीं।

उनका शातिर दिमाग माजरा समझना चाह रहा था।

फिर वह पुनः पहले कमरे में चली गईं।

यूनुस की जान में जान आई।

वह उसी तरह पड़ा रहा जबकि पेशाब के जोर से मसाने फटने को थे।

जमाल साहब और खाला की हकीकत, सनूबर का जमाल साहब की तरफ झुकाव और सनूबर के साथ जमाल साहब के रिश्ते को लेकर खाला-खालू के ख्वाब...

पूरी पहेली यूनुस के सामने थी।

उस पहेली का हल भी उसके सामने था।

लेकिन उसमें यूनुस का कोई रोल न था...

इस स्थिति से निपटने के लिए यूनुस के दिमाग में एक बात आई।

क्यों न सनूबर को वस्तुस्थिति से अवगत कराया जाए! उसके बाद जो होगा, सो होगा।

अठारह

जब यूनुस ड्यूटी से घर लौटा, उस समय दिन के बारह बजे थे।

खाला घर में नहीं थीं। हस्बेमामूल खाला पड़ोसियों के घर बैठने गई हुई थीं।

सनूबर लगता है स्कूल नहीं गई थी और किचन में चावल पका रही थी।

यूनुस आजकल सनूबर से ज्यादा बातें नहीं करता। बस, काम भर की बातें। वह सीधे आँगन में पानी की टंकी की तरफ हाथ-मुँह धोने चला गया।

गमछे से मुँह पोंछते हुए वह पहले कमरे में चला गया। पर्दा उठा हुआ था। बाहर से रोशनी अंदर आ रही थी। शायद बिजली नहीं थी, वरना इस घर में टीवी कम ही बंद रहता है।

यूनुस तख्त पर लेट गया।

उसने आँखें बंद कर लीं।

उसके माथे पर गहरी लकीरें थीं।

सनूबर कब आकर दरवाजे के पास खड़ी हुई उसे पता न चला। जब सनूबर ने दरवाजा खोला तो चूँ... की आवाज से उसकी तंद्रा भंग हुई।

उसने सनूबर के चेहरे को ध्यान से देखा।

उसे लगा कि सनूबर उससे कुछ कहना चाह रही है।

यूनुस उठ बैठा।

उसने सनूबर के पलटे हुए होंठ और भारी पलकों में कैद उदास आँखों को बड़ी हसरत से देखा। कितना प्यार था सनूबर से उसको।

सनूबर तख्त के पास कुर्सी पर बैठ गई।

यूनुस को लगा कि उसके दिल की गहराइयों से आवाज गूँजी हो - 'सनूबर...!'

सनूबर कुछ न बोली।

'सनूबर, तुम्हें मालूम है, तुम्हारे साथ धोखा हो रहा है।'

यूनुस की बहकी-बहकी बातें सुनकर सनूबर डरी हुई लग रही थी।

'डरो नहीं, ये सच है... तुम्हारे साथ तुम्हारी मम्मी एक खेल खेल रही हैं।'

सनूबर ने अपने कान पर हाथ रख लिए - 'क्या बक रहे हो, यूनुस...?'

'सच सनूबर, तुम्हें जमाल साहब से हुशियार रहना चाहिए। वह बड़ा धोखेबाज है। मैं कैसे कहूँ कि जमाल अंकलवा कितना कमीना है।'

तभी दीवाल घड़ी टनटनाई - 'टन्न!'

सनूबर ने घड़ी देखी - 'एक बज गए, मम्मी आती होंगी।'

यूनुस की समझ में न आ रहा था कि बीती रात की दास्तान को वह किन लफ्जों में बयान करे।

फिर भी हिम्मत करके वह बोला - 'सनूबर! वो जमाल सहबवा तुमसे हमदर्दी का दिखावा करता है और जानती हो वो कितना कमीना है कि सुनोगी तो... अच्छा किसी से बताओगी तो नहीं न!'

सनूबर इतने में झुँझला गई।

'नहीं बाबा, किसी से नहीं कहूँगी, तुम बताओ तो सही।'

'तो सुनो, कल रात मैंने अपनी आँखों से देखा। अल्ला-कसम, कलाम-पाक की कसम जो झूठ बोलूँ मुझे मौत आ जाए। मैंने जमाल साहब और खाला को कल रात एक साथ एक बिस्तर पर देखा है सनूबर... तुम्हें विश्वास हो या न हो ये सच है सनूबर...'

सनूबर ने अपने कान बंद कर लिए।

वह रोने लगी।

'कल रात वो हालात देखने के बाद कहाँ सो पाया हूँ, सनूबर!'

यूनुस का मन तो हल्का हुआ लेकिन सनूबर तो जैसे बेजान हो गई।

खाला आईं तो यूनुस आँखें बंद किए सोने का नाटक करता रहा।

सनूबर अपने कमरे में लेटी रही।

खाला यूनुस के पास कुर्सी पर बैठ कर चीखीं - 'कहाँ मर गई कुतिया...'

सनूबर ने जवाब न दिया तो उठ कर अंदर गईं और सनूबर को झिंझोड़कर उठाते हुए बोलीं - 'कैसे पसरी है महारानी, खाना-वाना बनेगा या आज हड़ताल है? इसीलिए उनसे कहती हूँ कि लड़कियन को पढ़वाइए मत, लेकिन सुनें तब न! आजकल अपने जमाल अंकल की शह पाकर हरामजादी जबान लड़ाना सीख गई है।'

सनूबर कुछ न बोली और उठ बैठी।

यूनुस ने भी आवाज सुनकर नींद खुलने का अभिनय किया।

तब तक चिट्टे-पोट्टे स्कूल से घर आ गए और संयोग से लाइट भी आ गई। छुटकी जमीला ने बस्ता यूनुस की गोद पर पटककर टीवी ऑन किया।

टीवी से चिपककर घंटों वह कार्टून प्रोग्राम देखा करती है।

यूनुस ने देखा कि सनूबर गाली खाकर भी न उठी तो खाला स्वयं किचन में घुसीं।

खाना तो वैसे तैयार ही था।

बस दाल छौंकना बाकी था।

दुपहर में सब्जी बनती न थी। दाल-भात अचार वगैरा के साथ खाया जाता। खालू 'हरियर मिर्च' के साथ खाना खा लेते थे।

दाल छौंक कर खाला ने यूनुस को आवाज दी।

यूनुस उठा और किचन के पास दालान में अपनी सोने की जगह नंगे फर्श पर बैठ गया।

सनूबर वैसे ही गुमसुम लेटी रही और खाला के संग यूनुस ने खाना खा लिया।

यूनुस जानता था कि सनूबर इतनी आसानी से उसकी बात पर विश्वास करेगी नहीं। वह अपने तईं छानबीन जरूर करेगी।

पता नहीं उसने क्या छानबीन की और उससे उसे क्या हासिल हुआ लेकिन अगली सुबह यूनुस ने अपने बिस्तर पर अपनी बगल में गर्माहट पाई तो जाना कि सनूबर उसकी बगल में लेटी है।

वह घबरा कर उठ बैठा।

सनूबर ने उसका हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा।

यूनुस ने पहले कमरे और अंदर वाले कमरे की तरफ देखा। आहट लेने की कोशिश की। दीवाल घड़ी पाँच बार टनटनाई।

इसका मतलब सभी सो रहे हैं।

खालू तो ड्यूटी गए हुए हैं।

वह सनूबर के बगल में लेट गया।

सनूबर ने उसे बाँहों में भर लिया।

पतली-दुबली सनूबर का नर्म-गुनगुना आलिंगन...

सनूबर उसके कानों में फुसफुसाई - 'मुझे भगा कर ले चलो इस जहन्नुम से यूनुस...!'

उस दिन उसे एहसास हुआ कि वह कितना कमजोर आदमी है।

उस दिन उसने फैसला किया कि अब वह अपने लिए एक नई जमीन तलाशेगा...

एक नया आसमान बनाएगा...

एक नए सपने को साकार करेगा...

एक नई पहचान

एक

घंटी की टनटनाहट के साथ प्लेटफार्म में हलचल मच गई।

रात के ठिठुरते अंधियारे को चीरती पैसेंजर की सीटी नजदीक आती गई और चोपन-कटनी पैसेंजर ठीक साढ़े बारह बजे प्लेटफार्म पर आकर रुकी।

इक्का-दुक्का मुसाफिर गाड़ी से उतरे। पूरी गाड़ी अमूमन खाली थी।

यूनुस जल्दी से इंजन की तरफ भागा। वह इंजिन के पीछे वाली पहली बोगी में बैठना चाहता था। यदि खालू आते भी हैं तो इतनी दूर पहुँचने में उन्हें समय तो लगेगा ही।

पहली बोगी में वह चढ़ गया।

दरवाजे से लगी पहली सीट पर एक साधू महाराज लेटे थे।

अगली लाइन में कोई न था। हाँ, वहाँ अँधेरा जरूर था। वैसे भी यूनुस अँधेरी जगह खोज भी रहा था। उसने अपना बैग ऊपर वाली बर्थ पर फेंक दिया और ट्रेन से नीचे उतर आया।

वह चौकन्ना सा चारों तरफ देख रहा था।

अचानक उसके होश उड़ गए।

स्टेशन के प्रवेश-द्वार पर खालू नीले ओवर-कोट में नजर आए। उनके साथ एक आदमी और था। वे लोग बड़ी फुर्ती से पहले गाड़ी के पिछले हिस्से की तरफ गए।

यूनुस तत्काल बोगी पर चढ़ गया और टॉयलेट में जा छिपा।

उसकी साँसें तेज चल रही थीं।

ट्रेन वहाँ ज्यादा देर रुकती नहीं थी।

तभी उसे लगा कि कोई उसका नाम लेकर आवाज दे रहा है - यू...नू...स! यू...नू...स!

यूनुस टॉयलेट में दुबक कर बैठ गया।

गाड़ी की सीटी की आवाज आई और फिर गाड़ी चल पड़ी।

वह दम साधे दुबका रहा।

जब गाड़ी ने रफ्तार पकड़ ली, तब उसकी साँस में साँस आई।

बैग कंधे पर टाँगे हुए ही वह खड़े-खड़े मूतने लगा।

वाश-बेसिन के पानी से उँगलियों को धोते वक्त उसकी निगाहें आईने पर गईं।

आईने के दाहिनी तरफ स्केच पेन से स्त्री-पुरुष के गोपन-संबंधों को बयान करता एक बचकाना रेखांकन बना हुआ था।

यूनुस ने दिल बहलाने के लिए उस टॉयलेट की अन्य दीवारों पर निगाह दौड़ाई।

दीवार में चारों तरफ उसी तरह के चित्र बने थे और साथ में अश्लील फिकरे भी दर्ज थे।

यूनुस टॉयलेट से बाहर निकला, लेकिन वह चौकन्ना था।

ट्रेन की खिड़की से उसने बाहर झाँका।

दो पहाड़ियों के बीच से गुजर रही थी गाड़ी। आगे जाकर महदइया की रोशनी दिखाई देगी क्योंकि अगला स्टेशन महदइया है।

सिंगरौली कोयला क्षेत्र का आखिरी कोना महदइया यानी गोरबी ओपन-कास्ट खदान।

हो सकता है कि खालू ने खबर की हो तो महदइया स्टेशन में उनके मित्र उसे खोजने आए हुए हों।

पहाड़ियाँ समाप्त हुईं और रोशनी के कुमकुम जगमगाते नजर आने लगे।

इसका मतलब स्टेशन करीब है।

महदइया स्टेशन के प्लेटफार्म में प्रवेश करते समय ट्रेन की गति धीमी हुई तो यूनुस पुनः एक टॉयलेट में जा घुसा। वह किसी तरह के खतरे का सामना नहीं करना चाहता था।

उसका अंदाज सही था।

इस प्लेटफार्म पर भी उसे अपने नाम की गूँज सुनाई पड़ी। इसका मतलब ये सच था कि खालू ने यहाँ भी अपने दोस्तों को फोन कर दिया था।

वह टॉयलेट में दुबक कर बैठा रहा और पाँच मिनट बाद ट्रेन सीटी बजा कर आगे बढ़ ली।

यूनुस ने राहत की साँस ली।

टॉयलेट से वह बाहर निकला।

उसने देखा कि साधू महाराज के पैर के पास एक स्त्री बैठी है। वह एक देहाती औरत थी। साधू महाराज के वह पाँव दबा रही थी।

यूनुस ने उस सीट के सामने ऊपर वाली बर्थ पर अपना बैग रखा। फिर खिड़की के पास वाली सीट पर बैठ कर शीशे के पार अँधेरे की दीवार को भेदने की बेकार सी कोशिश करने के बाद अपनी बर्थ पर उचक कर चढ़ गया।

उसे नींद आने लगी थी।

एअर-बैग से उसने गर्म चादर निकाली और उसे ओढ़ लिया। एयर-बैग अपने सिरहाने रख लिया ताकि चोरी का खतरा न रहे।

ट्रेन की लकड़ी की बेंच ठंडा रही थी। वैसे तो उसने गर्म कपड़े पर्याप्त मात्रा में पहन रखे थे, लेकिन ठंड तो ठंड ही थी। रात के एक-डेढ़ बजे की ठंड। उसका सामना के करने लिए औजार तो होने ही चाहिए।

वह उठ बैठा और अपनी जेब से सिगरेट निकाल ली। सिगरेट सुलगाते हुए साधू महाराज की तरफ उसकी निगाह गई।

देहाती स्त्री बड़ी श्रद्धा से साधू महाराज के पैर दबा रही थी।

साधू महाराज यूनुस को सिगरेट सुलगाते देख रहे थे। दोनों की निगाहें मिलीं।

यूनुस ने महसूस किया कि वह भी धूम्रपान करना चाहता है।

यूनुस बर्थ से नीचे उतरा।

उसने महाराज की तरफ सिगरेट बढ़ाई।

साधू महाराज खुश हुआ।

उसने सिगरेट सुलगाई और गाँजा की तरह उस सिगरेट के सुट्टे मार कर बाकी बची सिगरेट स्त्री को दे दी।

स्त्री प्रसन्न हुई।

उसने सिगरेट को पहले माथे से लगाया फिर भोले बाबा का प्रसाद समझ उस सिगरेट को पीने लगी।

स्त्री के बाल लटियाए हुए थे। हो सकता है कि वह सधुआइन बनने की प्रक्रिया में हो। उसके माथे पर भभूत का एक बड़ा सा टीका लगा हुआ था।

उसकी आँखों में शर्मो-हया एकदम न थी। वह एक यंत्रचालित इकाई सी लग रही थी। तमाम आडंबर से निरपेक्ष, साधू महाराज की सेवा में पूर्णतया समर्पित...

साधू महाराज ने पूछा - 'कौन बिरादरी का है तू?'

यूनुस को मालूम है कि बाहर पूछे गए ऐसे प्रश्नों का क्या जवाब दिया जाए। जिससे माहौल न बिगड़े और काम भी चल जाए।

एक बार उसने सच बोलने की गलती की थी, जिसके कारण उसे बेवजह तकलीफ उठानी पड़ी थी।

उसे कटनी में स्थित उस धर्मशाला का स्मरण हो आया, जहाँ वह एक रात रुकना चाहता था।

तब सिंगरौली के लिए चौबीस घंटे में एक ट्रेन चला करती थी। कोतमा से वह कटनी जब पहुँचा तब तक सुबह दस बजे चोपन जाने वाल पैसेंजर गाड़ी छूट चुकी थी। अब दो रास्ते बचे थे। वापस कोतमा लौआ जाए या फिर कटनी में ही रहकर चौबीस घंटे बिताए जाएँ। वैसे कटनी घूमने-फिरने लायक नगर तो है ही। कुछ सिनेमाघरों में 'केवल वयस्कों के लिए' वाली पिक्चर चल रही थीं। ट्रेन में ही एक मित्र बना युवक उससे बोला कि चलो, स्टेशन के बाहर एक धर्मशाला है। मात्र दस रुपए में चौबीस घंटे ठहरने की व्यवस्था। खाना इंसान कहीं भी खा लेगा। हाँ, एक ताला पास में होना चाहिए। धर्मशाला में ताला नहीं मिलता। जो भी कमरा मिले उसमे ग्राहक अपना ताला स्वयं लगाता है। यूनुस ने कहा था कि ताला खरीद लिया जाएगा।

वे लोग स्टेशन के बाहर निकले और सड़क के किनारे बैठे एक ताला-विक्रेता से यूनुस ने दस रुपए वाला एक सस्ता सा ताला खरीद लिया।

वे दोनों धर्मशाला पहुँचे।

पीली और गेरुआ मिट्टी से पुती हुई एक पुरानी इमारत का बड़ा सा प्रवेश-द्वार। जिसके माथे पर अंकित था - 'जैन धर्मशाला'।

वे अंदर घुसे।

अंदर द्वार से लगा हुआ प्रबंधक का कमरा था।

उस समय वहाँ कोई भी न था।

सहयात्री ने कहा कि चलो, धर्मशाला देख तो लो।

वे दोनों अंदर की तरफ पहुँचे। दुतल्ला में चारों तरफ कमरे ही कमरे बने थे। बीच में एक उद्यान था। उद्यान के अंदर एक मंदिर। पानी का कुआँ, हैंड-पंप, और नल के कनेक्शन भी थे।

वे वापस आए।

प्रबंधक महोदय आ चुके थे।

वह एक कृशकाय वृद्ध थे।

चश्मे के पीछे से झाँकती आँखें।

उन्होंने रजिस्टर खोल कर लिखना शुरू किया - 'नाम?'

सहयात्री ने बताया - 'कमल गुप्ता।'

- 'पिता का नाम?'

- 'श्री विमल प्रसाद गुप्ता'

- 'कहाँ से आना हुआ और कटनी आने का उद्देश्य?'

- 'चिरमिरी से कटनी आया, रेडियो का सामान खरीदने।'

- 'ताला है न?'

कमल गुप्ता ने बताया - 'हाँ!'

प्रबंधक महोदय ने रजिस्टर में कमल से हस्ताक्षर करवाकर उसे कमरा नंबर पाँच आवंटित किया।

फिर उन्होंने यूनुस को संबोधित किया।

- 'नाम?'

- 'जी, मुहम्मद यूनुस।'

स्वाभाविक तौर पर यूनुस ने जवाब दिया।

प्रबंधक महोदय ने उसे घूर कर देखा। उनकी भृकुटि तन गई थी। चेहरे पर तनाव के लक्षण साफ दिखलाई देने लगे।

लंबा-चौड़ा रजिस्टर बंद करते हुए बोले - 'ये धर्मशाला सिर्फ हिंदुओं के लिए है। तुम कहीं और जाकर ठहरो।'

सहयात्री कमल गुप्ता नहीं जानता था कि यूनुस मुसलमान है। सफर में बातचीत के दौरान नाम जानने की जरूरत उन दोनों को महसूस नहीं हुई थी, शायद इसलिए वह भी उसे घूरने लगा।

यूनुस के हाथ में एक नया ताला था।

वह कभी प्रबंधक महोदय के दिमाग में लगे ताले को देखता और कभी अपने हाथ के उस ताले को, जिसे उसने कुछ देर पहले बाहर खरीदा था।

उसने अपनी जिंदगी के व्यावहारिक शास्त्र का एक और सबक हासिल किया था।

वह सबक था, देश-काल-वातावरण देखकर अपनी असलियत जाहिर करना।

उसने जाने कितनी गलतियाँ करके, जाने कितने सबक याद किए थे।

सलीम भाई के पास ऐसी सहज-बुद्धि न थी, वरना वह ऐसी गलतियाँ कभी न करता और गुजरात के कत्ले-आम में यूँ न मारा जाता।

इसीलिए जब साधू महाराज ने उसकी बिरादरी पूछी तो वह सचेत हुआ और तत्काल बताया - 'महाराज, मैं जात का कुम्हार हूँ।'

साधू महाराज के चेहरे पर सुकून छा गया।

चेहरा-मोहरा, चाल-ढाल, कपड़ा-लत्ता और रंग-रूप से उसे कोई नहीं कह सकता कि वह एक मुसलमान युवक है, जब तक कि वह स्वयं जाहिर न करे। उसे क्या गरज कि वह बैठे-बिठाए मुसीबत मोल ले।

वह इतना चालाक हो गया है कि लोगों के सामने 'अल्ला-कसम' नहीं बोलता, बल्कि 'भगवान-कसम' या 'माँ-कसम' बोलता है। 'अल्ला जाने क्या होगा' की जगह 'भगवान जाने' या फिर 'राम जाने' कह कर काम चला लेता है।

अगर कोई साधू या पुजारी प्रसाद देता है तो बाकायदा झुक कर बाईं हथेली पर दाहिनी हथेली रखकर उस पर प्रसाद लेता है और उसे खाकर दोनों हाथ सिर पर फेरता है। जबकि वही सलीम भाई हिंदुओं से पूजा-पाठ आदि का प्रसाद लेता ही नहीं था। यदि गलती से प्रसाद ले भी लिया तो फिर उसे खाता नहीं था, बल्कि चुपके से फेंक देता था।

यूनुस को यदि कोई माथे पर टीका लगाए तो वह बड़ी श्रद्धा-भाव प्रकट करते हुए बड़े प्रेम से टीका लगवाता और फिर उसे घंटों न पोंछता।

ऐसी दशा में उस पर कोई संदेह कैसे कर सकता है कि वह हिंदू नहीं है।

वैसे भी अनावश्यक अपनी धर्म-जाति प्रकट कर परदेश में इंसान क्यों खतरा मोल ले।

बड़ा भाई सलीम अगर यूनुस की तरह सजग-सचेत रहता। खामखा, मियाँ-कट दाढ़ी, गोल टोपी, लंबा कुर्ता और उठंगा पैजामा न धारण करता तो गुजरात में इस तरह नाहक न मारा जाता...

साधू महाराज ने यूनुस को आशीर्वाद दिया - 'तू बड़ा भाग्यशाली है बच्चा! तेरे उन्नत ललाट बताते हैं कि पूर्वजन्म में तू एक पुण्यात्मा था। इस जीवन में तुझे थोड़ा कष्ट अवश्य होगा लेकिन अंत में विजय तेरी होगी। तेरी मनोकामना अवश्य पूरी होगी।'

यूनुस साधू महाराज के चेहरे को देख रहा था।

उसके चेहरे पर चेचक के दाग थे। दाढ़ी बेतरतीब बढ़ी हुई थी। उसकी आयु होगी यही कोई पचासेक साल। चेहरे पर काइयाँपन की लकीरें।

साधू महाराज के आशीर्वाद से यूनुस को कुछ राहत मिली।

वह पुनः अपनी जगह पर चला गया और बैग से लुंगी निकालकर उसे बर्थ पर बिछा दिया ताकि लकड़ी की बेंच की ठंडक से रीढ़ की हड्डी बची रहे।

बर्थ पर चढ़ कर उसने जूते उतारकर पंखे पर अटका दिए।

अब वह सोना चाहता था।

एक ऐसी नींद कि उसमें ख्वाब न हों।

एकदम चिंतामुक्त संपूर्ण निद्रा...

जबकि यूनुस जानता है कि उसे नींद आसानी से नहीं आया करती। नींद बड़ी मान-मनौवल के बाद आया करती है।

उसने उल्टी तरफ करवट ले ली और सोने की कोशिश करने लगा।

खटर खट खट... खटर खट खट

ट्रेन पटरियों पर दौड़ रही थी।

सुबह छह बजे तक ट्रेन कटनी पहुँच जाएगी। फिर सात-साढ़े सात बजे बिलासपुर वाली पैसेंजर मिलती है। उससे बिलासपुर तक पहुँचने के बाद आगे कोरबा के लिए मन पड़ेगा तो ट्रेन या बस पकड़ी जाएगी।

बिलासपुर में स्टेशन के बाहर मलकीते से मुलाकात हो जाएगी।

मलकीते के पापा का एक ढाबा कोतमा में हुआ करता था। सन चौरासी के सिख-विरोधी दंगों में वह होटल उजड़ गया। सिख समाज में ऐसा डर बैठा कि आम हिंदुस्तानी शहरी दिखने के लिए सिख लोगों ने अपने केश कटवा लिए थे। मलकीते तब बच्चा था। अपने सिर पर रूमाल के जरिए वह केश बाँधा करता था। वह गोरा-नाटा खूबसूरत लड़का था। यूनुस को याद है कि लड़के उसे चिढ़ाया करते थे कि मलकीते अपने सिर में अमरूद छुपा कर आया करता है।

उसके पापा एक रिश्तेदार से मिलने राँची गए थे और इंदिरा गांधी की हत्या हो गई। वे उस समय सफर कर रहे थे। सुनते हैं कि सफर के दौरान ट्रेन में उन्हें मार दिया गया था।

उस कठिन समय में मलकीते ने अपने केश कटवा लिए थे।

मलकीते के बारे में पता चला था कि सन चौरासी के बाद मलकीते की माली हालत खराब हो गई थी।

तब मलकीते की मम्मी अपने भाई यानी मलकीते के मामा के पास बिलासपुर चली गई थीं। वहीं मामा के होटल में मलकीते मदद करने लगा था।

स्टेशन के बाहर एक शाकाहारी और मांसाहारी होटल है - 'शेरे पंजाब होटल'।

यही तो पता है उसका।

इतने दिनों बाद मिलने पर जाने वह पहचाने या न पहचाने, लेकिन मलकीते एक नंबर का यार था उसका!

यूनुस ने फुटपाथी विश्वविद्यालय की पढ़ाई के बाद इतना अनुमान लगाना जान लिया था कि इस दुनिया में जीना है तो फिर खाली हाथ न बैठे कोई। कुछ न कुछ काम करता रहे। तन्हा बैठ आँसू बहाने वालों के लिए इस

नश्वर संसार में कोई जगह नहीं।

अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए इंसान को परिवर्तन-कामी होना चाहिए।

लकीर का फकीर आदमी का जीना मुश्किल है।

जैसा देस वैसा भेस...

कठिन से कठिन परिस्थिति में भी इंसान को घबराना नहीं चाहिए। कोई न कोई राह अवश्य निकल आएगी।

इसीलिए तो वह अम्मी-अब्बू, घर-द्वार, भाई-बहिन, रिश्ते-नाते आदि के मोह में फँसा नहीं रहा।

अपना रास्ता स्वयं चुनने की ललक ही तो है कि आज वह लगातार जलावतनी का दर्द झेल रहा है।

इसी उम्मीद में कि इस बार की छलाँग से शायद अल्लाह की बनाई इत्ती बड़ी कायनात में उसे भी कोई स्वतंत्र पहचान मिल ही जाए...

दो

यूनुस ने सोचा कि सुबह कटनी पहुँच कर नाश्ता करने के बाद बिलासपुर वाली गाड़ी पकड़ी जाएगी।

कटनी का खयाल दिमाग में आया तो यूनुस को बड़की आपा याद हो आई।

कहते हैं कि बड़की कटनी में कहीं रहती है।

खाला भी तो बता रही थीं कि अम्मा एक बार चोरी-छिपे उससे मिल आई हैं। चूँकि उसने हिंदू धर्म अपना लिया है, इसलिए उसे अब बिरादरी में मिलाया तो नहीं जाएगा।

यूनुस सोच रहा था कि उनके घर में एक भी औलाद ठीक न निकली? इसका कारण क्या है?

उसने बचपन की तमाम घटनाओं को सूत्र-बद्ध करना चाहा। ज्ञात हुआ कि उसके अब्बा वंश-वृद्धि के पावन कर्तव्य को प्राथमिकता देते हैं। इस पावन यज्ञ से फुर्सत पाने के बाद उनकी चिंता का केंद्र नौकरी हुआ करती। अब्बा दिन भर में एक कट्टा बीड़ी और एक रुपए की खैनी हजम कर जाते। चाय अमूमन घर में ही पीते। इसके बाद भी यदि समय बच जाता तो स्थानीय कादरिया-मस्जिद कमेटी के लोगों के बीच उठते-बैठते। उनके एक और हमदर्द दोस्त थे नन्हू भाई, जिन्हें यूनुस नन्हू चच्चा कहा करता।

अब्बा ने अपनी बेशुमार आल-औलाद की तालीम-तरबीयत, कपड़ा-लत्ता और खान-पान के बारे में कभी ध्यान नहीं दिया। बच्चे चाहे जैसे अपना जीवन गुजारें, स्वतंत्र हैं।

अम्मा भी अब्बा के कदम से कदम मिलाकर चलती रहीं। उन्होंने प्रति तीन बरस पर एक संतान के औसत को बरकरार रखा। बच्चा अपने प्रयास से स्तन खोज कर मुँह में ठूँस ले तो ठीक, वरना अम्मा के भरोसे रहा तो भूखा ही रह जाएगा।

अम्मा ज्यादातर अपनी खाट में पसरे रहा करती थीं। ठंड के दिनों मे अब्बा या कि बड़की खाट के नीचे बोरसी में आग डाल कर रख दिया करते। यूनुस उस खाट में कभी-कभी सोता था। बोरसी की आँच से गुदड़ी गरमा जाती और पीठ की अच्छी सिंकाई हो जाती थी।

अम्मा अपने सुख-दुख या फिर अपनी हारी-बीमारी की चिंता किया करती थीं।

हाँ, दिन भर चाहे जिस हालत में रहें, शाम होते ही अच्छे से चेहरा धो-पोंछकर स्नो-पाउडर लगा लेतीं। आँखों में काजल और माँग 'अफसन' से भरतीं। जिस्म फैल-छितरा गया है तो क्या, बनना-सँवरना तो इंसान की फितरत होती है। हाँ, लिपिस्टिक की जगह होंठ पान की लाली से रँगे हुआ करते।

अम्मा को भी अब्बा की तरह अपनी ढेर संतानों की कोई चिंता कभी नहीं रही।

इस अव्यवस्था का परिणाम ये हुआ कि यूनुस की बड़ी बहिन बड़की अभी ठीक से जवान हो भी न पाई थी कि घर से भाग गई।

यूनुस को याद है कि बड़की उसे कितना प्यार किया करती थी।

यूनुस तब चार-पाँच बरस का होगा।

बस जब देखो तब अपनी बड़की आपा के पास मँडराता रहता। अम्मा को तो बच्चों की सुध ही न रहती थी।

पड़ोस में एक सिंधी फलवाला रहता था।

सिंधी फलवाला सुबह नौ-दस बजे ठेले पर फल सजाया करता। वह नगर में घूम-घूम कर फल बेचा करता था। नौ बजे घर के सामने वाला सार्वजनिक नल खुला करता था। आधा-पौन घंटा भीड़ रहा करती, फिर जब लोग कम हो जाते तब बड़की बाल्टी लेकर पानी भरने निकलती। यूनुस भी अपनी बड़की आपा के पीछे एक डब्बा या डेगची लेकर पानी भरने चला आता।

बड़की आपा पानी भरने लगती और सिंधी फलवाले को देख मुस्कराया करती।

तब फलवाला यूनुस को इशारे से अपने पास बुलाता।

यूनुस फल की लालच में दौड़ा चला जाता।

सिंधी फलवाला उसे दो केले देता। कहता, एक अपनी आपा को दे देना।

यूनुस को बड़े शौक से अपने हिस्से का केला खाता और बड़की आपा के हिस्से का केला उसे दे देता। बड़की आपा केला हाथ में पकड़ती तो उसके गाल शर्म से लाल हो जाते। यूनुस को क्या पता था कि इस केले के माध्यम से उन दोनों के बीच किस तरह का 'कूट-संवाद' संपन्न होता था। वह तो चित्तीदार केले का मीठा स्वाद काफी देर तक अपनी जुबान में बसाए रखता था।

रात के नौ बजे बड़की आपा यूनुस का हाथ पकड़ कर टहलने निकलती।

तब सिंधी फलवाला फेरी लगाकर वापस लौट आता था।

बड़की आपा से जाने क्या इशारे-इशारे में वह बातें किया करता।

यूनुस को पुचकारकर पास बुलाता।

कोई सड़ा सेब या केला उसके हाथ में पकड़ा देता।

यूनुस खुश हो जाता।

यूनुस रात में बड़की आपा के पास ही सोया करता था।

बड़की आपा उसे अच्छी तरह सीने से चिपका कर सुलाया करती और बहुत प्यार किया करती।

कभी-कभी सिंधी फलवाले का आपा के साथ किया गया व्यवहार नन्हे यूनुस को अच्छा नहीं लगता था। चूँकि बड़की आपा बुरा नहीं मानती थी और लजाकर हँस देती थी, इसलिए यूनुस सिंधी फलवाले की हरकतों को चुपचाप हजम कर जाया करता था।

एक दिन यूनुस के दोस्त छंगू ने उसे बताया कि यार, अगर तू बुरा न माने तो एक बात कहूँ। यूनुस ने उसे डपट दिया कि ज्यादा भूमिका न बाँधते हुए मुद्दे पर आ जाए।

छंगू बिचारा कहने में संकोच कर रहा था कि कहीं यूनुस उसे पीट न दे, इसलिए उसने एक बार फिर यूनुस से गछवा लिया कि भाई मेरे, तू बुरा तो नहीं मानेगा।

खीज कर यूनुस ने उसकी गर्दन पकड़ कर हिला दिया।

छंगू की आँखें बाहर निकलने को हो आईं, तब उसने कहा - 'छोड़ दे बे, बताता हूँ... कल रात घर के पिछवाड़े मैंने देखा था कि वो सिंधी फलवाला तेरी दीदी का चुम्मू ले रहा है।'

यूनुस का खून खौल उठा - 'तो?'

छंगू घबरा गया - 'इसीलिए मैं बोल रहा था कि बुरा न मानना।'

यूनुस ने उसे कुछ न कहा।

उसने स्वयं अपनी आँखों से ऐसा ही एक प्रतिबंधित दृश्य देखा था। वाकई बड़की हद से आगे बढ़ रही है। अम्मा और अब्बा को तो बच्चे पैदा करने से फुर्सत मिलती नहीं कि वे बच्चों के बारे में सोचें।

एक दिन यूनुस पिछवाड़े आँगन में खड़े-खड़े मूत रहा था तब उसने अमरूद के पीछे देखा था कि सिंधी फलवाला और बड़की काफी देर तक एक दूसरे से चिपके खड़े थे।

यूनुस की समझ में न आया कि वह तत्काल क्या करे। उसने एक पत्थर उठाया और सिंधी फलवाले की पीठ पर दे मारा।

फलवाले ने बुरा नहीं माना, बल्कि मार खाकर वे दोनों बड़ी देर तक हँसते रहे थे।

सिंधी फलवाला यूनुस को साला कहा करता और एक मुहावरा उछाला करता - 'सारी खुदाई एक तरफ, जोरू का भाई एक तरफ!'

उस गुप-चुप चलती प्रेम कहानी की जानकारी सिर्फ यूनुस को थी।

सलीम भाई घर से ज्यादा मतलब न रखता लेकिन उसे बड़की की कारस्तानी का अंदाजा हो रहा था। उसने अम्मा से बताया भी था कि नालायक बड़की को डाँटिए कि उस सिंधी फलवाले से दूर रहे। लेकिन अम्मा को कहाँ फुरसत थी... उस समय छोटकी पेट में थी। वे तो अपनी सेहत को लेकर ही परेशान रहा करती थीं।

कहते हैं कि सलीम भाई ने एक बार अपने दोस्तों के साथ उस फलवाले को डराया-धमकाया भी था। उसके दोस्तों ने सिंधी फलवाले के ठेले पर बचे हुए फल लूट लिए थे और उसे चेतावनी दी थी कि अपनी आदतों से बाज आए।

जब सिंधी फलवाले और बड़की ने देखा कि उनके प्रेम-व्यापार के दुश्मन हजार हैं तो एक दिन बड़की आपा उस सिंधी फलवाले के साथ कहीं भाग गई।

कहते हैं कि वे लोग कटनी चले गए हैं।

कटनी तो सिंधियों का गढ़ है गढ़...

इसीलिए यूनुस को कटनी से चिढ़ है।

बड़की के घर से भाग जाने के बाद जिसका मन सबसे ज्यादा हताहत हुआ वह सलीम भाई था। जाने क्यों अव्यवस्था का वह धुर विरोधी हुआ करता था। वह अपने दोस्तों में, अपने समाज में, अपनी और अपने परिवार की इज्जत बढ़ाने का प्रयास किया करता था। बड़की ने घर से भाग कर जैसे सरे-बाजार उसकी नाक कटा दी हो। सलीम भाई अपने दोस्तों के साथ कई दिनों तक सिंधी फलवाले और उसके घरवालों की टोह लेता रहा था। यदि इस बीच वे मिल गए होते तो पक्का है कि फौजदारी हो जाती और बाकी जिंदगी सलीम भाई जेल में काटते।

बड़े जिद्दी स्वभाव का था सलीम भाई।

सुनता सबकी लेकिन करता अपने मन की।

होश सँभालते यूनुस के बड़े भाई सलीम ने देखा कि इस घर के रंग-मंच में अब ज्यादा दिन का रोल उसके लिए नहीं। अम्मा और अब्बा जिस तरह से घर चला रहे थे, उसमें सलीम को अपना भविष्य अंधकारमय लगा।

बड़की आपा के घर से भागने के बाद सलीम ने दोस्तों का साथ छोड़ दिया।

कुछ दिन वह घर में कैद रहा।

एकदम अज्ञातवास का जीवन...

अम्मा-अब्बा सभी उसकी हालत देख परेशान रहने लगे थे।

फिर एक दिन वह फजिर की अजान सुनकर जामा-मस्जिद की तरफ चला। वहाँ उसे नमाज पढ़ने के बाद तब्लीगी-जमात वालों के मुख से तकरीर सुनने को मिली। दिल्ली से जमात आई हुई थी। तब्लीगी-जमात वालों के रहन-सहन और जीवन-दर्शन से उसे प्रेरणा मिली।

उसके अशांत दिलो-दिमाग को सुकून मिला।

उन लोगों से वह इतना प्रभावित हुआ कि उस दिन घर न लौटा।

तब्लीग वालों के साथ ही मस्जिद में कयाम किया।

शाम को अस्र की नमाज के बाद जमात के लोग स्थानीय स्तर पर लोगों से सीधे संपर्क करने के लिए गश्त पर निकले।

वह भी उनके साथ गश्त पर निकला।

अमीरे-जमात किस तरह अपरिचित कलमा-गो लोगों को दीन-ईमान की दावत दिया करते हैं, उसने देखा।

फिर मगरिब की नमाज के बाद जिक्र और ईशा की नमाज के बाद अल्लाह की तस्बीह और याद और गहरी नींद का ईनाम...

सलीम भाई तब नियमित रूप से जामा-मस्जिद में नमाज पढ़ने जाने लगा।

कभी-कभी चंद विदेशी मुसलमान भी धर्म-प्रचार और आत्मोत्थान के उद्देश्य से आया करते थे।

अब्बा तो कट्टर बरेलवी विचारों के थे। वे तब्लीगियों को 'मरदूद वहाबी' कहा करते और अक्सर एक तुकबंदी पढ़ा करते थे -

मरदूद वहाबी की यही निशानी

उठंगा पैजामा,

टकला सिर और काली पेशानी

बरेलवी लोगों की पोशाक देवबंदियों के ठीक विपरीत हुआ करती। देवबंदी जहाँ अपने सिर के बाल सफाचट करवाते हैं वहीं बरेलवी लोगों के बाल कान के ऊपर बढ़े होते हैं। देवबंदियों की मूँछें सफाचट रहेंगी जबकि बरेलवी लोग पतली-तराशी हुई मूँछें रखते हैं। बरेलवियों का पैजामा या शलवार टखनों के नीचे तक रहती है। उनकी टोपियाँ काली रहती हैं। सफेद टोपियाँ हों तो कुछ आसमान की तरफ अतिरिक्त उठी हुई रहेंगी। उनके कंधे पर शतरंजी डिजाइन का गमछा हुआ करता है।

यूनुस ने देवबंदी और बरेलवी दोनों तरह के मुसलमान करीब से देखे हैं। उसे आज तक समझ में नहीं आया कि बरेलवी लोगों के माथे पर बार-बार सिजदा करने से किसी तरह का दाग नहीं बनता है, जबकि इसी के उलट देवबंदी अभी महीने भर का पक्का नमाजी बना नहीं कि उसकी पेशानी पर गोल काला धब्बा उभर आता है।

ये ऐसी बुनियादी पहचान है जिसे दोनों अकीदे के लोग अपना अलग-अलग 'ड्रेस कोड' बनाए हुए हैं। इसी पहनावे और अन्य आउट-लुक से मुसलमान जान जाते हैं कि मियाँ किस अकीदे का है।

शिक्षित तबके का ओहदेदार मुसलमान जो इन सब लफड़ों में नहीं पड़ना चाहता उसके अकीदे के बारे में जानना मुश्किल होता है।

इसमें तो इतनी मुश्किल पेश आती है कि कोई ये भी न जान सकें कि वह हिंदू है या मुसलमान...

यूनुस ने अपनी जीवन-यात्रा में इतना जान लिया था कि हिंदुस्तान में रहना है तो वंदे मातरम कहना होगा...

सो उसे देखकर कोई नहीं कह सकता था कि वह एक मुस्लिम युवक है।

अब्बा, सलीम भाई के तब्लीगी लोगों में उठने-बैठने का विरोध करते।

सलीम हर वह काम करता जिससे अब्बा को दुख पहुँचता। वह उन्हें तकलीफ पहुँचाकर सुकून हासिल किया करता था। जाने क्यों सलीम भाई इतना परपीड़क बन गया था।

तब्लीगी जमातें जब नगर में आतीं, अमीरे-जमात वजीर भाई सलीम को बुलवा भेजते। सलीम भाई उन जमात वालों का स्थानीय मददगार हुआ करता। वह आने वाली जमात का इस्तेकबाल करता। उन्हें मस्जिद के एक कमरे में ठहराता। उन्हें कहाँ खाना पकाना है, कहाँ नहाना है और कहाँ पैखाने जाना है, पीने के पानी की व्यस्था कहाँ से होगी, सभी जानकारी वह उपलब्ध कराता।

तब्लीगी जमात के लोग अत्यधिक अनुशासन में रहा करते। अमीरे-जमात के हुक्म का अक्षरशः पालन किया करते।

जमात वालों की बड़ी सख्त दिनचर्या हुआ करती थी।

घड़ी देख के तमाम काम...

यूनुस भी कभी-कभी सलीम भाई के साथ वहाँ जाया करता था।

जब नगर का सबसे भव्य मंदिर एक छोटे से चबूतरे पर था। जब यहाँ पुलिस थाना और रेलवे स्टेशन के अलावा कोई पक्की इमारत न थी। तब नगर में मस्जिद के नाम पर बन्ने मियाँ की परछी हुआ करती थी। बन्ने मियाँ की आल-औलाद न थी। उन्होंने अपनी जमीन अंजुमन कमेटी को वसीयत कर दी थी।

बन्ने मियाँ ने एक पक्की मस्जिद के लिए स्वयं अपने हाथों से संगे-बुनियाद रखी थी। अल्लाह उनको करवट-करवट जन्नत बख्शे।

फिर स्थानीय स्तर पर चंदा करके वहाँ एक छोटा सा पक्का हाल बना।

मस्जिद के आँगन में एक कुआँ था। उस कुएँ का पानी बड़ा मीठा था। गर्मियों में भी पानी खत्म न होता। कमेटी वालों ने उस पर कवर लगा दिया। रस्सी-बाल्टी के लिए छोटा सा छेद था। कुएँ के एक तरफ दो कमरे थे, जिन्हें गुसलखाना कहा जाता था। दूसरी तरफ पिछवाड़े में इस्तिंजा (पेशाब) के लिए मूत्रालय था। फिर एक सीट वाला बैतुल-खुला यानी कि 'सेप्टिक टैंक' पैखाना था।

उस मस्जिद के पेश-इमाम बड़े काबिल बुजुर्ग थे। संयमित जीवन वाले, नेक, परहेजगार और आध्यात्मिकता के हिमायती। लंबा कद, पतली-दुबली काया, लंबी सी सफेद दाढ़ी। बोलते तो मुँह पर हाथ रख लिया करते। कहते हैं कि उनके पास काफी रूहानी ताकत थी। वे गंडा-तावीज आदि नहीं दिया करते थे। हाँ, दुआएँ कसरत से दिया करते और उनकी दुआएँ 'अल्लाह रब्बुल इज्जत' की बारगाह में कुबूल हुआ करती थी।

वे कुरान-शरीफ का इतना मधुर पाठ किया करते कि सुनने वाला मंत्रमुग्ध सुनता रहे। एकदम शुद्ध अरबी का उच्चारण। गले की बेहतरीन लयकारी। किरत ऐसी कि बस सुनते चले जाइए।

यूनुस कभी-कभी जुमा की नमाज पढ़ने उसी मस्जिद में जाता।

सलीम भाई वहाँ एक तरह से अवैतनिक मुअज्जिन बन चुका था। मुअज्जिन की अनुपस्थिति में वह मस्जिद का काम सँभाला करता था।

इसी कारण सलीम भाई किसी तरह का काम नहीं सीख पाया।

यूनुस धर्म पर आश्रित न था, बल्कि स्वाद-परिवर्तन के लिए धर्म के पास आया करता था। जैसे कि स्वाद-परिवर्तन करने के लिए पिक्चर देखना, कव्वाली सुनने जाना, फुटबाल मैच खेलना, बिजय भइया के साथ आरएसएस की शाखा में जाना या फिर गप्पें मारना...

सलीम भइया इसी तरह तब्लीग जमात वालों के साथ रहते-रहते जमात में चालीस-चालीस दिन के लिए बाहर निकल जाया करता था।

अब्बा पर उनके बरेलवी मौलानाओं से फतवा मिल चुका था कि ऐसा व्यक्ति जो देवबंदियों के अकीदे में विश्वास करे, उनके साथ उठे-बैठे, उसका बहिष्कार कर देना चाहिए, भले से वह अपना बेटा, बेटी, माँ या बाप या भाई-बहिन क्यों न हो!

अब्बा के पास आला हजरत इमाम अहमद रजा खाँ द्वारा बताई निदेशिका थी, जिसे वह पहले कमरे की दीवार में लगाए हुए थे। उसकी कुछ बातें आज भी यूनुस को याद हैं।

वहाबियो, देवबंदियों से नफरत करो।

वहाबियो, देवबंदियों के मौलवियों के पीछे नमाज पढ़ना मना है। उसकी नमाज न होगी और नमाज पढ़ने वाला गुनहगार भी होगा।

अगर कोई मुसलमान अपना निकाह या अपने बेटी-बेटे का निकाह, वहाबी या देवबंदी से करेगा तो निकाह हरगिज न होगा।

वहाबियों, देवबंदियों को दावत खिलाना, उनकी दावत खाना दोनों बातें नाजायज हैं।

सलीम भाई की गतिविधियाँ किसी से छिपी न थीं। वैसे भी वह जगह थी ही कितनी बड़ी कि बातें दबी रह सकें।

नगर के एक कोने में छींकिए तो दूसरे कोने तक आवाज चली जाए।

बरेलवी मौलानाओं, स्थानीय मदीना मस्जिद की कमेटी के मेंबरान की समझाइश से तंग आकर अब्बा ने ऐलान कर दिया था कि सलीम उनकी औलाद नहीं।

वे सलीम भाई को अपनी औलाद मानने से इनकार कर चुके थे।

इतने प्रतिबंधों से परेशान होकर सलीम भाई घर से भाग कर सिंगरौली खाला के पास चले गया।

वहाँ खालू ने सलीम भाई को बैढ़न में एक टीन के चादर से पेटियाँ बनाने वाले कारखाने में काम दिलवा दिया था।

वैसे खालू भी देवबंदियों से चिढ़ते थे।

वह एक कट्टर सुन्नी थे और बरेलवी अकीदे को मानते थे, लेकिन खाला के हस्तक्षेप के कारण वह सलीम भाई की उपस्थिति घर में बर्दाश्त किया करते थे।

शुरू में सलीम भाई बरेलवियों वाली मस्जिद में नमाज पढ़ता था, क्योंकि जिसके यहाँ वह काम सीखा करता था वह कट्टर स्वभाव का था। तब्लीगियों और देवबंदियों से बेतरह चिढ़ा करता था। जब सलीम भाई काम अच्छे से सीख गया तो वह एक दूसरे कारखाने में चला गया। ये भी एक मुसलमान का ही कारखाना था लेकिन ये जनाब देवबंदी खयालात के इंसान थे। वे जानते थे कि सलीम भाई के खालू बरेलवी हैं, फिर भी उन्होंने सलीम भाई को अपने यहाँ कारीगर रख लिया। अब सलीम भाई बैढ़न की देवबंदियों वाली मस्जिद में नमाज पढ़ने जाने लगा।

ये बात खालू को मालूम हुई तो उन्होंने खाला से साफ-साफ कह दिया कि वे वहाबियों को अपने घर में सहन नहीं कर पाएँगे।

खाला ने सलीम भाई को समझाया-बुझाया। उसे दुनियादारी की बातें सिखाना चाहीं। सलीम भाई कहाँ मानने वाला था।

इस बीच खालू आ गए तो सलीम उन्हें ही तब्लीग करने लगा।

'कब्रों की पूजा ठीक नहीं। अस्ल चीज है नमाज, रोजा, हज और जकात। दीन में राई-रत्ती का जोड़ने वाला बिदअती (देवबंदी लोग बरेलवियों को बिदअती कहते हैं और बरेलवी देवबंदियों को वहाबी!) कहलाता है। हुजूर सरकारे दो आलम सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम के लिए यदि सच्ची मुहब्बत है तो एक सच्चे मुसलमान को हक पर चलना चाहिए। बिदअतियों से बचना चाहिए।'

इतना नसीहत सुनकर फौजी खालू तो जैसे आपे से बाहर हो गए।

उन्होंने खाला का लिहाज छोड़ सलीम भाई को तत्काल घर-निकाला का फरमान दे दिया था।

फिर सलीम भाई बैढ़न में कारखाने में ही रहने लगा था।

वहीं उसका रंग-रूप बदल गया था।

अब वह कमीज-पैंट पहनना छोड़कर कुर्ता-शलवार पहनने लगा था। चूँकि उसका बदन गठा हुआ था और कद दरमियाना था, सो उस पर घुटनों के नीचे झूलता कुर्ता और टखनों से उठी शलवार खूब जमती थी। सिर पर वह सफेद गोल टोपी लगाने लगा था। वह एक परंपरागत मुसलमान दिखता था। जैसे कि देवबंद के दारूल-उलूम के छात्र दिखा करते हैं।

खाला जब कभी बैढ़न जातीं तो सलीम भाई से मिला करतीं।

उन्हें सलीम भाई से बड़ी मुहब्बत थी।

सलीम भाई ने अपनी कमाई से खाला के लिए कई साड़ियाँ खरीदी थीं।

फिर सुनने में आया कि किसी तब्लीग जमात के साथ सलीम गुजरात की तरफ चला गया है। गुजरात के वड़ोदरा से एक-दो खत बैढ़न के कारखाने में आए थे, जिसमें खाला के लिए सलीम भाई अलग से खत लिखा करता था।

सलीम भाई के आखिरी खत से पता चला था कि वह एक तब्लीगी परिवार में घर-जमाई बन गया है।

अच्छे खाते-पीते लोग हैं वे।

फिर एक दिन गुजरात के दंगों में उसके मारे जाने की खबर आई।

सलीम भाई का पहनावा और रहन-सहन गोधरा-कांड के बाद के गुजरात में उसकी जान का दुश्मन बन गया था...

तीन

खटर खट् खट्, खटर खट् खट्...

ठंड से ठिठुरती हुई ट्रेन की एक लंबी चीख...

ट्रेन की पटरियों के बदलने की आवाज के साथ ब्रेक की चीं...चाँ...

और ट्रेन रुक गई।

खिड़कियों के बाहर रोशनी की झलक नहीं। इस लाइन के अधिकांश स्टेशन तो बिना बिजली-बत्ती वाले हैं।

संभावना है कि आउटर पर ट्रेन रुकी होगी या फिर कोई स्टेशन ही हो।

चोपन से सिंगरौली के बीच सिंगल-लाइन है। वैसे तो रात की ये पैसेंजर फास्ट-पैसेंजर के नाम से चलती है और छोटे-मोटे स्टेशन में रुकती नहीं लेकिन क्रासिंग के नाम पर इसे रोका ही जाता है।

चाय-पानी के लिए रात के सफर में ब्योहारी ही एक स्टेशन है, जहाँ कुछ आशा की जा सकती है। दिन में सरई-ग्राम और खन्ना बंजारी स्टेशन में चाय-नाश्ता मिलता है।

गार्ड, ड्राइवर और मुसाफिर ऐसी जगहों पर टूट पड़ते हैं।

यूनुस को नींद नहीं आ रही थी।

उसने नीचे की सीट पर निगाह दौड़ाई।

देखा कि साधू महाराज कंबल ओढ़े पड़े हैं।

उनके पैर उस स्त्री की गोद में हैं।

स्त्री गहरी नींद में है।

उसके वक्ष पर आँचल हटा हुआ है।

भरी-भरी छातियाँ और चेहरे पर सुकून के लक्षण...

यूनुस ने सोचा कि कितना मस्त जीवन है ये भी!

आत्म-विस्मृति का जीवन!

कमाने-खाने की कोई चिंता नहीं।

लोक-लाज की फिक्र नहीं।

व्यक्तिगत धन-संपत्ति का मोह नहीं।

बस, एक अंतहीन यात्रा में चलता जीवन...

बड़े भाई सलीम ने ऐसी ही राह अपनाई थी। उसने सोचा था कि इसी तरह तब्लीग (धर्म-प्रचार) करते-करते वह दुनिया के साथ-साथ आखिरत (परलोक) के इम्तिहानात में कामयाब रहेगा। उसने स्वयं को पूर्ण-रूपेण उस धार्मिक आंदोलन के लिए समर्पित कर रखा था।

और एक आस्थावान, धार्मिक प्रवृत्ति का साधारण युवक सलीम गुजरात के दंगों की भेंट चढ़ गया था।

यूनुस सलीम भाई की याद में खो गया था...

उसे आज भी याद है वो दिन जब आधी रात घर की साँकल बजी थी।

घर में यूनुस और बेबिया भर थे।

अब्बा आफिस के काम से शहडोल गए थे।

अम्मा पड़ोसी मेहताब भाई के साथ गढ़वा पलामू गई हुई थीं।

मेहताब भाई की मँगनी होने वाली है। उसने स्वयं अम्मा को अपने साथ ले चलने की जिद की। अंधे को क्या चाहिए दो आँख। अम्मा को तो घर छोड़ने का कोई न कोई बहाना चाहिए। बेबिया और यूनुस तो हैं ही घर के कुत्ते। भौंक-भौंक कर घर की रखवाली यही लोग तो करते हैं।

बाकी लोग तो मालिक ठहरे।

दुबारा साँकल बजी तो यूनुस ने आवाज लगाई - 'कौन?'

लगा नन्हू चच्चा की आवाज है - 'मैं हूँ भाई, नन्हू...!'

यूनुस को आश्चर्य हुआ कि नन्हू चच्चा और इस समय!

बेबिया अंदर वाले कमरे में घोड़ा-हाथी बेच कर सो रही थी।

यूनुस ने जल्दी से चड्डी पर गमछा लपेटा और दरवाजा खोला।

नन्हू चच्चा ही तो थे।

पतली-दुबली काया, लुंगी और कुर्ता पहने, सिर पर दुपल्ली टोपी।

बेतरतीब सी खिचड़ी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोले - 'गुल्लू का फोन आवा है... तुहरे अब्बा कहाँ हैं?'

यूनुस ने उन्हें सलाम किया और अंदर आने को कहा।

नन्हू चच्चा बेहद घबराए हुए थे - 'अब्बा-अम्मा कौनो नहीं हैं का?'

यूनुस मन ही मन डर गया।

जाने क्या बात है कि नन्हू चच्चा ऐसे घबरा रहे हैं।

उसने जिगर कड़ा कर पूछा - 'का बात हो गई चच्चा?'

नन्हू चच्चा की आँखें नम हो आईं।

'कुछ न पूछो, बस अपने अब्बा या अम्मा से बात करा दो बचवा!'

'दोनों नहीं हैं घर में, अब्बा तो शहडोल गए हैं, किसी भी समय आ सकते हैं लेकिन अम्मा बिहार गई हुई हैं। आप हम्में बताइए न का बात है?'

नन्हू चच्चा के बेटे गुल्लू यानी पीर गुलाम ने ही एक बार बताया था कि यूनुस का बड़ा भाई सलीम गुजरात के बड़ोदा शहर में रहता है।

वह तब्लीगी-जमात वालों के साथ गुजरात चला गया था।

वहीं एक तब्लीगी मियाँ भाई इस्माइल सिद्दीकी ने उसे अपना घर-जमाई बना लिया।

इस्माइल सिद्दीकी की छोटी-मोटी दुकानदारी है। इकलौती बेटी के लिए नेक दामाद सलीम। सलीम वहीं मजे में है।

पीर गुलाम जब भी बड़ोदा से कोतमा आता, सलीम भाई का संदेश लेकर आता। उसने एक बार बताया था कि अभागे सलीम ने ससुराल वालों के सामने अपने सगों को मरा हुआ मान लिया है। अब वह कभी लौटकर इधर नहीं आएगा। उसने अपने जीवन का मकसद जान लिया है। सलीम सरेआम ऐलान करता है कि उसने अल्लाह की बनाई इस कायनात में अपने नए माँ-बाप पाए हैं। उसकी मुमताज महल बीवी उसे अपना बादशाह, शहंशाह और सरताज मानती है।

उनके एक बेटा भी है शाहजादा सलीम की तरह...

अम्मा की ढेर सारी संतान हैं फिर भी वह पहलौठी औलाद सलीम को भूल न पातीं। उनका सलीम से लगाव कुछ ज्यादा ही था।

वह जितना सलीम भाई के बारे में उल्टी-सीधी सूचनाएँ पातीं, उनका दुख बढ़ता जाता। वह जार-जार आँसू बहातीं और अल्लाह-रसूल से उसके लिए दुआएँ माँगा करतीं।

पीर गुलाम से अम्मा ने सलीम की चोरी से बहू और बच्चे की फोटो भी मँगवाई थी। उस तस्वीर में सलीम भाई किसी मौलाना सा दिखलाई दे रहा था और उसकी बीवी बुर्के का घूँघट पलट कर चेहरा बाहर निकाले थी। उनका बच्चा ऐसा दिख रहा था जैसे रुई का गोला हो। अम्मा अपनी संदूकची में उस तस्वीर को सँभाल कर रखती है।

यूनुस ने नन्हू चच्चा से पूछा - 'क्या खबर आई है?'

यूनुस के सामने केबिल टीवी के माध्यम से प्रसारित की जा रही गुजरात की दिल दहलाने वाली घटनाएँ कौंध गईं।

गोधरा-कांड के बाद गुजरात में मार-काट मची हुई है। तमाम अखबार और टीवी के न्यूज चैनल गुजरात के दंगों को आम-जन के सामने लाने में भिड़े हुए हैं। एक से बढ़कर एक न्यूज रिपोर्टर कैमरा टीम के साथ जहाँ-तहाँ पिले पड़ रहे हैं ताकि दंगों का लाइव-कवरेज बना सकें।

ताकि उनके चैनल की टीआरपी अचानक बढ़ जाए।

ताकि उनके रिपोर्ट्स से मीडिया में तहलका मच जाए।

'ये देखिए, हाथ में पेट्रोल से भरी बोतलें लिए औरतें आगे बढ़ रही हैं। ये देखिए हरे रंग में पुता एक खास जाति के लोगों का मकान, पर्दे की ओट से झाँकती बुर्का ओढ़े औरतें, छत पर पत्थर ईंट इकट्ठा करते बच्चे, नमाजें अदा

करते बुजुर्ग, और ये देखिए किस तरह तड़ातड़ बोतलें फेंकी जा रही हैं... यह एक्सक्लूसिव कवरेज सिर्फ इसी चैनल में आप देख रहे हैं... ये देखिए हमारे संवाददाता के साथ जनता कैसा बर्ताव कर रही है... लोग हमारा कैमरा तोड़ कर फेंक देना चाहते हैं... इस सड़क पर देखिए पुलिस के सिपाही मौन खड़े भीड़ को अवसर दे रहे हैं... वो देखिए एक गर्भवती महिला किस तरह भागना चाह रही है... किस तरह त्रिशूल और लाठियाँ लिए, माथे पर गेरुआ पट्टी बाँधे युवक उस महिला को चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए हैं... और... और... ये रहा उस महिला के पेट का त्रिशूल की नोक से चीरा जाना... देखिए किस तरह त्रिशूल की नोक पर अजन्मा बच्चा भीड़ के सिरों पर खुले आकाश में लहराया जा रहा है... याद रखिए ये लाइव-कवरेज हमारे चैनल पर ही दिखलाया जा रहा है... हमारे जाँबाज रिपोर्टरों ने अभी कुछ दिन पहले अफगानिस्तान में अमरीकी हमले के दौरान अमरीकी सैनिकों की बहादुरी और आतंकवादियों के सफाए का आँखों देखा हाल आप लोगों तक पहुँचा कर मीडिया की दुनिया में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया था... और अब गुजरात में क्रिया के बाद की स्वाभाविक प्रतिक्रिया को पूरी ईमानदारी के साथ आप लोगों तक पहुँचाया जा रहा है। रात नौ बजे पूरे घटना-क्रम पर फिर एक बार निगाह डालता हमारा दंगा-विशेष देखना न भूलें। इस कार्यक्रम के प्रायोजक हैं हीरे-जवाहरात के व्यापारी, चरस-हीरोइन के स्मगलर, जूता, साबुन, कंडोम और नेपकिन्स के निर्माता...

न्यूज के दूसरे-तीसरे चैनल भी यही सब दिखा रहे हैं। सभी दावा कर रहे हैं कि ये जो टीवी पर दिखाया जा रहा है, वह सब पहली बार उन्हीं के चैनल वालों ने दिखाया है। कि पूरे घटनाक्रम पर लगातार नजर रखी जा रही है। कि हमारे संवाददाता अपनी जान जोखिम पर डालकर दंगे की विश्वसनीय एवं आँखों देखी खबरें लगातार भेज रहे हैं। कि सिर्फ हमारा चैनल प्रस्तुत कर रहा है खसखसी दाढ़ी वाले मुख्य मंत्री और कवि-प्रधानमंत्री से सीधी बातचीत। मुख्य मंत्री, गृह मंत्री और प्रधान मंत्री कटघरे में। एकदम एक्सक्लूसिवली आपके लिए... जिसे प्रायोजित कर रहे हैं चड्ढी-बनियान, शीतल-पेय और बीयर के निर्माता...

विपक्ष में बैठे लोग, जिनके दामन में जाने कितने दंगों के दाग लगे थे, जिन्होंने अपने शासनकाल में बाबरी-मस्जिद शहीद होने दी थी, घड़ियाली आँसू बहा रहे थे।

गुजरात की सुलगती आग में उनके गैर-सांप्रदायिक कार्यकर्ता कहाँ थे, ऐसे कठिन समय में उनका रोल क्या था? क्या वे कभी इन सवालों का जवाब दे पाएँगे?

पक्ष-विपक्ष संसद में आपस में नोंक-झोंक कर रहे थे कि विपक्षियों के कार्यकाल में कितने दंगे हुए। सन चौरासी के सिख-विरोधी दंगे के आँकड़े के आगे तो गुजरात में कुछ ज्यादा नहीं हुआ है। सांप्रदायिक दंगों का इतिहास पलट लें, हर दंगों में स्त्रियों के साथ बलात्कार हुए हैं। मौजूदा सरकार के कार्यकाल में हुए इस 'सहज-प्रतिक्रियात्मक' कार्य में आँकड़ा उतना ज्यादा नहीं है। बहुसंख्यकों के आक्रोश का दमन स्थिति को और भयावह बना सकता था, इसलिए सरकार ने उन्हें थोड़ा सा मौका ही तो दिया था कि वे अपनी भावनाओं पर काबू पा लें। अभी तो कम ही हादसात हुए हैं।

मिलेटरी आदेश की प्रतीक्षा में कैंपों में दंड पेल रही थी।

पुलिस ऐसे समय में मूक दर्शक बनने की ऐतिहासिक भूमिका का तत्परता से पालन कर रही थी।

टीवी पर आती खबरों से फिर गुजरात धीरे-धीरे गायब होता गया कि नन्हू चच्चा ये कैसी खबर लेकर आ गए।

पीर गुलाम ने फोन पर क्या बात कही कि नन्हू चच्चा रात के बारह बजे समाचार पहुँचाने चले आए..

यूनुस का मन किसी अनहोनी की आशंका से विचलित हो रहा था।

नन्हू चच्चा चारपाई पर बैठे रहे।

फिर उन्होंने यूनुस से पानी माँगा।

लगता है कि बेबिया की नींद खुल गई थी।

वह भकुआई उठी थी।

यूनुस ने उससे चच्चा के लिए पानी लाने को कहा।

तभी दरवाजे की साँकल पुनः बजी।

लगता है कि अब्बा हैं, शायद ट्रेन से लौटे हों।

यूनुस ने लपक कर दरवाजा खोला, वाकई अब्बा ही थे।

नन्हू चच्चा ने उन्हें सलाम किया और फिर अब्बा के लिए भी एक गिलास पानी मँगवाया।

अब्बा ने जब पानी पी लिया तो नन्हू चच्चा ने खँखारकर गला साफ किया और अब्बा के गले लगकर रो पड़े - 'अपना सलीम नहीं रहा... वो दंगे में मारा गया!'

यूनुस को काटो तो खून नहीं।

बेबिया तो दहाड़ मार कर रो पड़ी।

ये अचानक कैसी खबर सुन रहा था परिवार...

एकदम अप्रत्याशित खबर...

अब्बा की आँखें भी नम हो गईं - 'साफ-साफ बताएँ कि क्या बात है?'

नन्हू चच्चा के आँसू रुकने का नाम नहीं ले रहे थे - 'इधर जब से गुजरात सुलगा हुआ था, मेरे बेटे पीर गुलाम की भी कोई खबर नहीं मिल पाई थी। बाद में पीर गुलाम का फोन मिला कि वह ठीक है। मामला जब ठंडाया तो पीर गुलाम डरते-डरते आपके बेटे सलीम के मुहल्ले गया था। वहाँ उसे पता चला कि सलीम तब्लीग-जमात में चिल्ला काट कर लौटा था। जमात के लोग स्टेशन से अलग-अलग ऑटो बुक कराकर अपने-अपने घरों को लौट रहे थे। सलीम दंगाइयों के बीच फँस गया था। सलीम को आटो-सहित जला कर मार डाला गया। तब्लीगी-जमात वालों ने ही घटना की खबर उसकी ससुराल में पहुँचाई थी। ससुराल वाले इस उम्मीद में थे कि शायद सलीम जान बचा कर कहीं छुपा होगा और मामला ठंडाने पर लौट आएगा। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। वह खबर सही थी। उस आटो के साथ सलीम भी जल कर खाक हो गया था।'

यूनुस को पीर गुलाम की बात याद हो आई जो सलीम भाई को 'लादेन' के नाम से याद किया करता। तब्लीगी-जमात से जुड़ा होने के कारण सलीम भाई का गेट-अप एकदम ओसामा बिन लादेन की तरह दिखता था।

यूनुस को उसका लिबास और उसकी पहचान ले डूबी।

एक बार यूनुस खालू के इलाज के लिए पीजीआई लखनऊ गया था।

वहाँ एक मौलवी नुमा बुजुर्ग दिखे तो आदतन उसने उन्हें सलाम किया।

वे बहुत नाराज दिखलाई दे रहे थे।

कैसा जमाना आ गया। हद हो गई भाई। ये डाक्टर जिन्हें फरिश्ता भी कहा जाता है, मुसलमान मरीजों से चिढ़ते हैं। जान जाते हैं कि मरीज मुसलमान है तो फिर इलाज में लापरवाही करते हैं। सारे काफिर डाक्टर आरएसएस के एजेंट हैं। वे चाहते हैं कि 'मीम' का सही इलाज न होने पाए।

थोड़ी सी हुज्जत की नहीं कि इलाज ऐसा कर देंगे कि रिएक्शन हो जाएगा, दवा कोई फायदा न करेगी।

यूनुस ने उन मौलवी साहब की बात का खंडन किया - 'अरे नहीं मौलवी साहब, एकदम गल्त कह रहे हैं आप! भला बताइए, हम भी तो मुसलमान हैं, लेकिन हमने तो ऐसा कोई भेदभाव यहाँ नहीं होते देखा। डाक्टर बिचारे भरसक मरीज को तंदुरुस्त करने में लगे रहते हैं।'

फिर उसने मौलवी साहब का मन बदलने के लिए पूछा - 'आप कहाँ के रहने वाले हैं?'

उन्होंने कहा - 'जौनपुर जिले का रहने वाला हूँ।'

'ठीक है, लेकिन आपकी ये शिकायत वाजिब नहीं कि डाक्टर मरीजों से भेदभाव करते हैं। बीमारी जितनी बड़ी होगी, डाक्टर उतने सीरियस रहते हैं।'

'दुनिया देखी है मैंने बेटे, तुम मुसलमान जरूर हो, लेकिन तुम्हारा रहन-सहन एक आम हिंदू शहरी की तरह है। इसलिए तुम हिंदुओं के बीच खप जाते हो। हमें देखकर कोई भी जान लेता है कि हम मुसलमान हैं। वे हमसे नफरत करने लगते हैं। सोचता हूँ कि इस मुल्क के उलेमा ये फतवा जारी कर दें कि मुसलमानों को दाढ़ी रखने की सुन्नत से छूट मिल जाए।'

यूनुस उन बुजुर्ग की बात सुनकर काँप गया था।

चार

पंकज उधास की गजल का एक शे'र यूनुस को याद हो आया -

दुनिया भर की यादें हमसे मिलने आती हैं

शाम ढले, इस सूने घर में मेला लगता है

दीवारों से, मिलकर रोना, अच्छा लगता है

हम भी पागल हो जाएँगे, ऐसा लगता है

जिंदगी के इस पड़ाव पर दुनिया भर की यादें यूनुस का पीछा कर रही थीं।

अब्बा, अम्मा, खाला, खालू, सलीम भाई, बड़की, सिंधी फलवाला, सनूबर, मलकीते, छंगू, जमाल साहब, डाक्टर, बन्ने उस्ताद, मन्नू भाई मिस्त्री, यादव जी, बानो और भी न जाने कितने जाने-अन्जाने चेहरे, हर चेहरे की एक अलग दास्तान...

उसकी नींद उचट चुकी थी।

चोपन-कटनी पैसेंजर किसी स्टेशन पर रुकी।

बर्थ पर पसरे-पसरे उसने झुककर खिड़की के बाहर झाँका।

तभी साधू महाराज बड़बड़ाए - 'लागत है ब्योहारी आ गवा।'

यूनुस उठ बैठा।

ब्योहारी में पैसेंजर कुछ देर रुकती है।

सिंगरौली और कटनी के बीच ब्योहारी ही वह जगह है जहाँ चाय-पानी का बंदोबस्त हो सकता है।

वह ट्रेन से नीचे उतरा।

सामने ही चाय मिल रही थी।

ठंड यहाँ भी काफी थी।

वह काँपते-ठिठुरते चाय के अड्डे तक पहुँचा।

टीटीई, गार्ड और ड्राइवर चाय सुड़क रहे थे।

पोलिथीन के कप में उसने भी चाय ली। अपने हाथों को उस गर्म चाय के कप में सेंका और चाय सुड़कने लगा।

चाय पीकर उसने सिगरेट सुलगा ली और अपनी बोगी की तरफ चल पड़ा।

बोगी में चढ़कर वह टॉयलेट में घुस कर बाकी बची सिगरेट पीने लगा, दीवारों पर लिखी इबारतों को ध्यान-पूर्वक पढ़ते हुए पेशाब किया।

वापस अपनी बर्थ पर आकर वह बैठ गया।

साधू महाराज की बगल में स्त्री लंबलेट हो चुकी थी।

साधू-महाराज बैठे-बैठे सो रहे थे। दोनों एक ही कंबल में थे।

यूनुस ने एअर-बैग खोलकर अपनी डायरी निकाली।

डायरी के पहले पन्ने पर सनूबर की हस्तलिपि में यूनुस का नाम हिंदी और अंग्रेजी में दर्ज था।

साथ में बहुत सारी व्यक्तिगत जानकारी लिखी हुई थी। जैसे पता के स्थान पर खालू के क्वाटर का पता। गाड़ी नंबर के स्थान पर खालू के स्कूटर का नंबर। टेलीफोन नंबर की जगह पांडे पीसीओ का फोन नंबर।

दूसरे पन्ने पर यादगार तिथियों के लिए जगह थी।

उसमें सनूबर ने यूनुस की और अपनी जन्मतिथि लिखी हुई थी।

यूनुस : 1 जुलाई 1980

सनूबर : 20 अक्टूबर 1987

डायरी के एक पन्ने पर सनूबर ने अपने बारे में विस्तार से लिखा था।

पसंद का रंग : पिंक

पसंद का खाना : चिकन-बिरयानी

पसंद की मिठाई : रसमलाई

पसंद का टीवी कार्यक्रम : अंताक्षरी

किससे नफरत करती हो : धोखेबाजों से

किसे प्यार करती हो : 'माई' से

यूनुस जानता है कि 'माई' का मतलब क्या है? 'माई' सनूबर का कोड-वर्ड है।

माई याने एम और वाय।

एम से मोहम्मद और वाय से यूनुस।

आजकल की लड़कियाँ कितनी चालाक होती हैं। यूनुस हँस पड़ा।

फिर उसने कई पन्ने पलटे।

कहीं कोई गाना लिखा था, कहीं नात-शरीफ, कहीं कव्वाली और कहीं शेरोशायरी।

डायरी के आखिर में एक लिफाफा रखा था। जिस पर लिखा पता उसने एक बार पुनः पढ़ा -

टू,

मेसर्स मेहता कोल एजेंसी

ट्रांसपोर्ट नगर, कोरबा, छत्तीसगढ़

और भेजने वाले के पते की जगह लिखा था -

पुनीत खन्ना

मैनेजर

मेहता कोल एजेंसी

सिंगरौली, सीधी, म.प्र.

लिफाफा के अंदर पुनीत खन्ना साहब ने एमसीए की कोरबा यूनिट के मैनेजर के नाम एक सिफारशी खत लिखा था -

महोदय,

पत्रवाहक मोहम्मद यूनुस पेलोडर और पोकलैन आपरेटर है। वह सिंगरौली यूनिट का एक ईमानदार, टेकनीकली-ट्रेंड, कमर्शियली बेस्ट वर्कर है। पारिवारिक कारणों से मो. यूनुस, अपना ट्रांसफर कोरबा चाह रहा है।

इसलिए आप इसे कोरबा-यूनिट में काम दे सकते हैं।

आपका

पुनीत खन्ना

यूनुस इस खत को पहले भी कई बार पढ़ चुका था।

उसे गर्व हुआ कि अल्लाह के रहमो-करम से अब उसकी अपनी एक स्वतंत्र पहचान बन चुकी है।

उसने खत को डायरी में रखा और करवट बदल कर लेट गया।

गार्ड की व्हिसिल की आवाज आई और फिर ट्रेन की सीटी गूँजी।

ट्रेन चल पड़ी।

खटर खट खट

खटर खट खट

सुबह तक कटनी पहुँचेगी ट्रेन...

यूनुस को नींद ने कब अपनी आगोश में ले लिया, उसे पता न चल सका...

शीर्ष पर जाएँ